# विज्ञापन ॥

मालूम करता हूं सर्व मतों के महाजनों से मैंने ये "सिद्ध मूर्त्ति विवेक विलास" ग्रन्थ जिन आज्ञा प्रदीप सब जीवों के उपकार के वास्ते रचा है. जब आप लोग इस को पढ़ेंगे. तब मेरा परिश्रम सफल होगा बड़ा अफ़सोस तो यह है कि मारवाड़ी. सेठ सहूकार लोग इल्म से हीन तन और धन दोनों का फ़ायदा नहीं उठा सकते हैं. जो पढ़ेंगे वह ही इस ग्रन्थ के परिश्रम को और फ़ायदे को समझेंगे राज राजेश्वर गंगासिंह बहादुर दत्त सन्मान प्रतिष्ठत श्रीमान् गुणज्ञ उदार्य नम्र सेठ जी श्री चांदमल जी ढढ्ढा तथा श्रीयुत साह सेठ मगन मल जी, मंगलचन्द जी झावक. ने मुझे उद्यत किया तब इस ग्रन्थ को छपवाने का अधिकार सा० श्रीकुंदनमल जी के पुत्र कनगी

चंद वेगाणी को दिया गया, जो कोई धर्मार्थी पुरुष इस ग्रन्थ को लेकर अपने साधर्मियों को देकर ज्ञान बृद्धि करेगा, वह जीव अक्षय सुख की पायाबंधी करेगा, ऐसा मूर्त्ति मण्डन का ग्रन्थ किसी ने नहीं छापा है, लेने का अवसर मत चूको इस में ज्ञान वृद्धि के वास्ते जो द्रव्य से और भाव से मदद देगा तो अनेक चमत्कारिक ग्रन्थ संसारिक कला तथा, परमार्थ विद्या के सरल साधु भाषा में प्रकाश करना सहज होगा ज्ञान वृद्धि वगैर न तो संसार में सुख होता है और नहीं पर भव सुधरता है वह ज्ञान वृद्धि पाठशाला पुस्तकालय वगैर नहीं हो सकती है, त्यागी लोगों का सर्वत्र विहार नहीं अगर ज्ञान रहित त्यागी नाम धारी मुल्कों में भटकते फिरे उस से भी क्या परमार्थ हासिल हो सकता है, इस वास्ते सनातन जातियों के चेलो को पढ़वाके पंडित उपदेशक बनवाकर मुल्कों में भेजकर उपदेश कराया

जाय तो गृहस्थ लोग धर्म करने पर सुखी हो जायगें. वहुतसी फ़िजूल ख़राव रीतियां चल रही है. वह मिट जायगी और सत्य सनातन धर्म वढ़ेगा दक्षिण प्रांत देशों में लाखों जैन लोग निज धर्म नहीं जानते है. पोप पंथ में पड़ रहे हैं हमारे वहुत से जैनों की ऐसी समझ है कि पांचवां आरा है, तर २ सब चीज़ घटती ही जायगी. लेकिन क्या पंचम काल ऐसा समझदार एकांत जैनों में ही घुस गया. प्रत्यक्ष देखते नहीं उद्यम और बुद्धि से अंगरेज़ क्या थे और क्या होय गये भगवान ने इस पंचम काल में तेइग्न उदय धर्म धन का फ़र्माया है कोई एक जैन निकेवल ज्ञान शून्य घंटा वजाने में ही मुक्ति और बहुत से मुंह के पट्टी बांधने से ही मुक्ति मान रहे हैं. यहां तक नहीं जानते हम जो कर रहे हैं वह क्या वस्तु है उस से क्या लाभ है और कैसे करना चाहिये उन लोगों के वास्ते ज़रूर हम

घटती का समयानुमान करते हैं, विवेक विना कुछ धर्म नहीं इस वास्ते जैन पंडितों से सीखो पढ़ो ज्यों तुम्हारी दशा सुधरे, मन ही में डेढ स्यानें मत वनो इस वास्ते पाखगड खगडन मूर्त्ति मगडन का अमोलख ग्रन्थ मैंने प्रकाश किया है जैन परमेश्वर की मूर्त्ति मंडना करते हुये नारायण रुद्र के मंदिर बहुत प्राचीन हैं, ऐसा जैन शास्त्रों से सबूत कर दिया है, इस ग्रन्थ में युक्ति प्रमाण प्रत्यक्ष प्रमाण और आगम प्रमाण से मूर्त्ति पूजा सिद्ध किया है, परमेश्वर की मूर्त्ति साक्षात परमेश्वर रूप है उसकी पूजा में दया है और मुक्ति का हेतु है, हिंसा बताने वाले ढूंढक, तेरह पंथी, मनोमतियों का खगडन है, रामसनेही, मुसलमान, कृश्चियन, नानक, कबीरी, दादू वगैरह भी थापना मूर्त्ति मानते हैं ऐसा सिद्ध किया है, दयानन्दजी के समाजियों का शंका समाधान से मूर्त्ति पूजा सिद्ध करी है, खुद दयानन्दजी ने सत्यार्थप्रकाश में

वर वधू की मूर्त्ति को देखकर विवाह करवा देना ऐसे पांच मूर्त्ति मानी हैं, जिस में धर्मोपदेशक पितामह की मूर्त्ति मानी है इस वास्ते आर्य वेद-वक्ता श्री तीर्थंकर की मूर्त्ति पूजने वंदने योग्य सिद्ध भई तो फिर समाजी. लोग मूर्त्ति नहीं मानते सो उन्हों की भूल है, हम ने उन लोगों के शास्त्र कायदे से मूर्त्ति पूजा सिद्ध करदी है मूर्ख हठ वादी के वास्ते कोई भी शास्त्र काम नहीं देता, यह ग्रन्थ शैव विष्णु धर्मियों को निहायत लाभ दायक है। न्याय की जय सदा है ॥

---

# भूमिका ॥

मालूम करने में आता है, सर्व धर्मार्थी पुरुषों को सर्व मत वादियों का यही सारांश है कि अपने पूर्व आचार्यों के बनाये शास्त्रों पर यकीन रखना और इस बात का उपदेश हमेशा किया करते हैं, लेकिन उन सबों से मेरा ऐसा कहना है जहां तक वह शास्त्रों के कहने वाले आप्त पुरुष नहीं वहां तक उन्हों के मन कल्पित शास्त्र प्रमाण करने लायक नहीं अगर शास्त्र कर्त्ता आप्त कथित ग्रंथों की साक्षी देकर ग्रंथ रचे, अथवा प्रमाण से रचे प्रत्यक्षादि प्रमाण युक्त वह प्रमाण है लेकिन युक्ति करि खंडित होनी चाहिये जिन कर्त्ता के वचन ससनय के आग्रह से भरे हुये है, वह बुद्धि-मानों को मानने चाहिये लेकिन ऐसे प्रमाणों को साधने वाला वचन बिना सर्वज्ञ तीर्थंकर बिना

दूसरे के नहीं क्योंकि राग द्वेषादि दूषण रहित सर्व शास्त्रों के देवों की परीक्षा करने में तीर्थंकर ही निश्चय किया गया, कि ये ही आप्त हैं उन पर यक़ीन लाना ये ही दर्शन है, जैसे विना नींव मकान पुख़्ता नहीं तैसे विना शुद्ध देव १ शुद्ध गुरु २ और शुद्ध धर्म वग़ैर मुक्ति नहीं, आप्त वचन को उत्थाप कर कोईतप क्रिया उग्र वि- हार करे, धन और स्त्री का त्यागी भी होय तो वह जीव आप्त का वचन लोपने से अनंत संसार रुलेगा वह आप्त के कहे हुये आचार्य रचित सूत्रों के ८४ आगम तथा अनेक ग्रंथ देवर्द्धीगणी जी ने गोमुख कवड़ यक्ष की सहाय से वारह हज़ार साधुओं का कंठाग्र पाठ विक्रम संवत् पांच सौ में लिखे थे, जिस में वहुत शास्त्र जैन के द्वेषियों ने नष्ट कर दिये जिस में वड़े २ सूत्र पैं- तालीस टीका निर्युक्ति भाष्यचूर्णी की श्लोक संख्या मिला के इस वक्त में इकहत्तर लाख पांच हज़ार

दो सौ इक्यानवे ७१०५२९१, वसुदेव हिंड मिला
कार है और आचार्यों को रचे व्याकरणादि छ
शास्त्रों को बहोत्तर कला जो ऋषभदेव ने चला
थी उस के कथन के तो फिर जुदे ही हैं. डाक्
बूलर ने डेढ़ लाख जैन पुस्तकों का पता लगा
या है. एक मुम्बई हाथे में तीन हाथे तो अल
हयदे ही हैं ये बात राजा शिव प्रसाद सितारे हिं
अपने इतिहास तिमिरनाशक ग्रंथ में लिखता है
इन जैन ग्रंथों की बड़ी संख्या प्रत्यक्ष में देख
अङ्गरेज़ों के बड़े २ पंडित जैन धर्म को बहुत
पुराना समझते हैं. इन शास्त्रों को देख महावीर
तीर्थंकर की सर्वज्ञता अङ्गरेज़ लोग ज़ाहिर करते
है इन जैनियों के शास्त्रों में बहुत ही विस्तार से
आप्त तीर्थंकर की मूर्ति की द्रव्य भाव से पूजा
करनी लिखी है. अभी वचपन की साल में जैनि
यों की तरफ़ से गवर्नर जनरल लार्ड साइन
कार्ज़न को कलकत्ते में मान पत्र दिया जिस प

लार्ड साहिब ने ऐसा फ़र्माया, मैं जब से भारत में आया सब लोगों ने मुझे मान पत्र दिया, लेकिन जैन धर्म का मान पत्र बहुत ही तारीफ़ के लायक़ है ऐसा मान पत्र दूसरा नहीं जैन धर्म की ऊंची भावना दया का बारीक विचार व्यव-हार की प्रतिष्ठा और विशाल अनु कंपा से सुशोभित गुप्त और प्रसिद्ध दान से मैं वाक़िफ़ हूं, मेरी अगली मुसाफिरी में तुम्हारे मंदिरों को देख ऐसा वाक़िफ़कार हुवा हूं उस मंदिरों की बनावट की सुन्दरता और धन खर्च से मुझे ऐसा मालूम हुवा कि जैन कौम का बड़ा ज़माना इस पृथ्वी पर था. हे मित्रो ! लार्ड साहिब ने ऐसी तारीफ़ मंदिर और जैन धर्म के कायदे की करी इसी तरह ये ही लार्ड साहिब राय बद्रीदास जी के बगीचे में मंदिर को देख बड़े खुश हुये धन्य २ करके कहा हे बद्रीदास ! धन्य तेरा मनुष्य जन्म सो तैने ये परमेश्वर का मंदिर ऐसा

करवाया. स्वर्ग और मुक्ति की धजा आरोपन कर मुक्ति के बीच की पायाबंधी करी है, हमारी मेम साहिब को दिखान फिर आऊंगा वह देख बड़े खुश होंयगे. हे मित्रो ! देखो ऐसे मंदिर जिनराज के देख पृथ्वी के बादशाह ने कर्त्ता को कैसा धन्य-वाद दिया. देव भक्ति करने को मुख्य आधार उन पर-मेश्वर की मूर्त्ति है, क्योंकि सर्वज्ञ देव इस वक्त में हाजिर नहीं क्योंकि वह देव जो धर्म कह गये हैं. उस से ही सर्व धर्म नीति और लोक नीति जीव जानता है, इस वास्ते वह उपकारी है, जैसे कोई अपने बड़ेरे की तसबीर को देख उन के गुणों की तारीफ करे उनकी भक्ति बहुमान करे, तो उन के सन्तान खुश होते है. उनकी तसबीर की लघुताई करे तो दिलगीर होते हैं. इस वास्ते प्रत्यक्ष में राज्य कर्त्ता महाराणी की बनी भई मूर्त्ति जनरल गवर्नर और प्रतिष्ठत अधिका-रियों की मूर्त्ति ठिकाने २ नजरों पड़ रही है.

समकित मुख्य दो भेद हैं, व्यवहार सम्यक्त १ और निश्चय सम्यक्त २, निश्चय सम्यक्त ऐसा है, पहली आत्मा का स्वरूप और पुद्गल के स्वरूप को जानना, आत्मा में चैतन गुण पुद्गल में जड़ गुण है, इस वास्ते आत्मा में सर्व पदार्थ जानने की शक्ति, लेकिन कर्म करके जीव अनादि काल से ढका हुवा है, इस वास्ते सर्व भाव जान सकता नहीं ऐसा निर्धार केवली के वचनों के सुनने से और पढ़ने से हुवा तब बाह्य पदार्थों पर से मोह का नाश करने से आत्मा गुण में आनंद होता है और जो संसार के आनंद है, वह सब अथिर है उसको सच मानने से कर्म बंध होता है उस से दुःख भोगना पड़ता है, जैसे २ आत्म ज्ञान निर्मल होता जाता है तैसे २ संसार कार्य से ममता घटती जाती है, सुख दुःख प्राप्त होने से कर्म का बंध जान राग द्वेष करते नहीं हैं. पुद्गल के संयोग से आगू जीव ने कर्म

बांधा है सो ही भोगने में आता है. विशेष शुद्धि हुई नहीं जिस से संसार छोड़ सकता नहीं श्रावक व्रत भी ले सकता नहीं लेकिन लेने की भावना रात दिन बनी रहती है. अनंतानु, बंधी क्रोधमान, माया, लोभ, सम्यक्त मोहनी. मिश्र. मोहनी. ये सात प्रकृति के क्षय होने से निश्चय सम्यक्त प्राप्त होता है. कृष्ण नारायण तथा श्रेणिक राजा की तरह वह जीव मुक्त होते हैं ऐसे जीव जिन मूर्त्ति देख ऐसी भावना भावते हैं. अहो ? ये प्रभु का मुख कमल कैसा है. जिस मुख से किसी की निंदा अथवा झूठ अथवा हिंसाकारी वचन कभी बोले ही नहीं अपनी जिह्वा इंद्री से षट्रस पदार्थों का विषय में राचे नहीं इस मुख से धर्मो-पदेश देकर अनेक जीवों को तारे है. इस वास्ते इस मुख को धन्य है. इस नासिका से सुगन्ध दुर्गंध में राचे नहीं. इस नेत्रों से पांच रंग के विषयों को सेवे नहीं कोई स्त्री के ऊपर काम

विकार से देखा नहीं, ऐसे ही किसी पर द्वेष नज़र से देखा नहीं, वस्तु का स्वभाव और कर्मों की विचित्रता विचार समभाव से रहे हुये हैं, ऐसे नेत्रों को धन्य है, इन कानों से राग रागनी सुनने रूप विषय में राचे नहीं अच्छा और बुरा शब्द जैसा कानों में पड़या उसको समभाव से सुना. इस शरीर से हिंसा अदत्त कभी किया नहीं जीव रक्षा ही वारी किसी को दुःख न होवे ऐसे वर्त्ते हैं. ग्रामानुग्राम विहार कर भव्य जीवों को संसार के दुःख से छुड़ा कर तारे हैं, अपने ज्ञान तप से कर्मों को क्षय कर केवल ज्ञान केवल दर्शन पाया है, ऐसे प्रभु को धन्य है इन्हों की जितनी भक्ति कर सकूं जितनी योग्य है, ऐसी शुभ भावना प्रभु की मुद्रा देखने से होती है इन प्रभु की मूर्त्ति की जल चंदन पुष्प धूपादिक उत्तम द्रव्यों से करी हुई अंग पूजा और अग्र पूजा गहना चढ़वाना इस मूजब पूजा में यथा शक्ति

धन खर्च करते हुये विचारना चाहिये कि मैं जो द्रव्य पैदा कर्त्ता हूं उस में अनेक तरह को पाप होते हैं, वह धन संसार में कुटुम्ब में लगाता हूं उस में भी पाप होता है इस वास्ते जो धन परमेश्वर की भक्ति में लगता है वह ही सफल है, पुराय बंध होता है. अंत में ये धन मेरे संग नहीं चलेगा इस पर से तृष्णा कम करना वह ही सुकृत है धर्म के बीज बोने को सात क्षेत्र आप्त ने बताये हैं. जिन मंदिर १ जिन मूर्त्ति २ जैन शास्त्र ३ साधू ४ साधवी ५ श्रावक ६ और श्राविका ७ इन्हों में लक्ष्मी लगाई हुई महान् फल दाता है. फिर विचार करे मैं जिन भक्ति करूंगा तो दूसरे जीव भक्ति की अनुमोदना करेंगे. वह तिरेंगे मेरी देखा देख दूसरे भी भाग्यवान जिन भक्ति करेंगे तो उनके तिरने का कारण मेरी द्रव्य भक्ति हो जायगी ऐसे अनेक लाभ द्रव्य पूजा से हैं. द्रव्य पूजा करके सम्यक्ती श्रावक भाव पूजा करे भगवंत

के पंच कल्याणक का स्वरूप दिल में भावे. अब अपनी आत्मा के संग प्रभु के गुण मिलावे अहो प्रभु ! अरागी मैं रागी प्रभु अद्वेषी मैं द्वेषी प्रभु अक्रोधी में क्रोधी प्रभु अमानी में मानी प्रभु अमाई मं माई प्रभु अलोभी मैं लोभी प्रभु अकामी मैं कामी प्रभु निर्विषयी में विषयी प्रभु आत्मा नंदी में संसारा नंदी प्रभु अतिंद्रय सुख का भोगी मैं पुद्गल का भोगी प्रभु स्वस्वभावी मैं विभावी प्रभु अजर मे सजर प्रभु अक्षय मे क्षय स्वभावी प्रभु अशरीरी में शरीरी प्रभु अनिंदक में निंदक प्रभु अचल में सचल प्रभु अमर में मरण सहित प्रभु निद्रा रहित मैं निद्रा सहित प्रभु निर्मोही में समोही प्रभु हास्य रहित मे हास्य सहित प्रभु रति रहित मैं रति सहित प्रभु अरति रहित में अरति सहित प्रभु शोक रहित मैं शोक सहित प्रभु भय रहित मैं भय सहित प्रभु दुगंछा रहित में दुगंछा सहित प्रभु निर्वेदी में सवेदी प्रभु

अक्लेशी में सक्लेशी प्रभु हिंसा रहित में हिंसक प्रभु
मृषावाद रहित में मृषावादी प्रभु इच्छा रहित में
सइच्छक प्रभु अप्रमादी में प्रमादी प्रभु आशा
रहित में आशावंत प्रभु सर्व जीवों को सुख दाता
में सर्व जीवों को दुख देने वाला प्रभु ठगाई
रहित में ठगने वाला प्रभु सबों के विश्वास पात्र
में अविश्वास पात्र प्रभु आश्रव रहित में आश्रवी
प्रभु निष्पापी में पापी प्रभु परमात्मा में वहिरात्मा
पने वर्त्तता प्रभु कर्म रहित में कर्म सहित इस
वजह से भगवान है सो अनंत गुण युक्त और में
दुर्गुणों से भरा हुवा इस वास्ते संसार में जन्म
मरणादि दुःख भोगता हूं. आज भाग्य का उदय
से प्रभु की मूर्त्ति देख उसके आलंबन से मुझे
प्रभु के गुण का स्मरण हुवा मेरा अपगुण समझने
में आया मेरे अवगुण टालने का उद्यम क
प्रभु जिस रस्ते चले उस रस्ते में चलूं इ
प्रकार से भावना भावते हुये जीव कर्मों को च

कर्त्ता है शुद्ध सम्यक्त होने से मोक्ष सुख होता है इस वास्ते ऐसा लाभ जानकर यथा शक्ति जिनेश्वर मूर्त्ति की पूजा करनी मंदिर कराने की आज्ञा और श्रावक को जिनराज की मूर्त्ति की अष्ट प्रकारी पूजा करने की आज्ञा महा निसीथ सूत्र में विस्तार से दी है, पुष्प पूजा में पुष्पों के जीवों को पीडा होती नहीं उलटी उन्हों की रक्षा होती है क्योंकि उन पुष्पों को गृहस्थ ले जावे तब मनुष्यों की गरमी से उन जीवों को क्लामना होय कोई सेज बिछा कर सोवे उस से जियादा तकलीफ पुष्पों को होता है इस वास्ते जो पुष्प प्रभु को चढे उनकी उमर तक उन पुष्पों को अबाधा रहती है, कभी पुष्पों का हार गूंथती वक्त बाधा मानते हैं लेकिन फूलों की पांखडी की डंडी पोली होती है, इस वास्ते पीडा विशेष होय नहीं शास्त्रों में और सूत्रों में केवली भगवान की आज्ञा मजब करते हुये निश्चय श्रावक दयावन्त हैं, द्रव्य पूजा में

जो स्वरूप हिंसा किंचित् है, तो उस पर श्रुत
केवली भगवान भद्र बाहु स्वामी आवश्यक नि-
र्युक्ति में कूवे का दृष्टान्त दिया है. जैसे कूवा
खोदते मिट्टी और तृषा परिसह युक्त मनुष्य हो जाता
है. लेकिन पानी निकलने से सर्व बाधा मिट
जाती है तैसे द्रव्य पूजा करते अल्प पाप जिन
भक्ति से बहुत निर्जरा भक्ति का फल उत्तराध्य-
यन में मुक्ति का कह्या है. साधु को गरम पानी
गृहस्थ वहिराता है उस पानी की गरम भाप से
क्या वायुकाय एकेंद्री उड़ते हुये तथा बड़े जान
वर त्रस जीव नहीं मरते है. ढूंढिये. तरह पं
पातरे के रोगान रंग चढ़ाते हैं उस के चि
माखी. मच्छरादि अनेक जीव नहीं मर जाते
अन्न जो गरमागरम साधुओं को वहिराते है
की गरम भाप से जीव नहीं मर जाते हैं
क्या श्रावक और साधु हिंसक ठहरेंगे
साधुओं को दान देता है वह लाभ सूत्रों के

मूजब जानना और जो मनोमती जैन धर्म का नाम धरा के जैन धर्म के सर्व सूत्र ग्रंथ नहीं मानते हैं ये केवल उन्हों का हठ वाद है बत्तीस सूत्र उन्हों ने माना है वह सच्चे हैं, बाकी के झूठे हैं इस बात का क्या प्रमाण है जो कहते हैं बत्तीस तो गणधर रचित है, बाकी आचार्यों के रचे हैं इस वास्ते नहीं मानते. हे मित्र ! हम कहते हैं गणधर रचित तो बारह अंग था जिस में से बारहवां अङ्ग तो विछेद गया, लारे रहे ग्यारह जिस में से आचारांग अठारह हज़ार पद का था सूयगडांग छत्तीस हज़ार पद का था. ऐसे दुगने २ इग्यारह अंग थे पद एक शंख्याते अक्षरों का होता है. अब विचारो ? गणधर रचित अब के अंग कैसे ठहरे, दूसरे पन्नवनाजी स्यामाचार्य ने बनाई है दशवीं कालिक सज्झंभव सूरि का बनाया हुवा है व्यवहार सूत्र, भद्र बाहू का बनाया हुवा है तुम्हारे माने बत्तीसों में २१ तो आचार्यों के

वनाये हुये नाम पर नाम सिद्ध है नंदी सूत्र में लिखा है. श्रीस्कंधिलाचार्य जी के वनाये सूत्र अर्थ इस भरत आर्यावर्त्त में चल रहा है तंत्रं देवंध- लायरिए इस वात से ऐसा ही सिद्ध है. देव ऋद्धिगणी कहते हैं. स्कन्धलाचार्य महाराज ने सव सूत्र ग्रंथों की संकलना कर पेश्तर ताड़ पत्रों पर लिखा दूसरी ये सबूती है कि एक सूत्र की भुलावन दूसरे सूत्र में है, वर्णन की भुलावन उवाइ सूत्र में है ज्ञाता सूत्र में द्रोपदी के अधिकार में जिन प्रतिमा की पूजा सत्रह भेद से जिस की. भुला- वन राय पसेणी जी में, भगवती जी में पन्नवना की भुलावन है वुद्धि से विचारो सूर्याभदेव कव हुवा और द्रोपदी कव हुई लेकिन ये भुलावन देव- र्द्धिगणि प्रमुख आचार्यों का दिया हुवा है. इत्या- दिक प्रमाणों से जाना जाता हैं कि जैनियों के सर्व सूत्र ग्रंथ आचार्यों का रचा हुवा है, समुद्र सरीखे वुद्धि के धनी आचार्यों को झूठा मानना और चार

सौ वर्षों का निकला लके बनिये का तथा लव
जी ढूंढक का कह्या वचन सच्चा मानना जिन्हों
को संस्कृत का तिल भर बोध नहीं था और न
प्राकृत का बोध था, केवल पार्श्व चंद्र सूरि कृत
टव्वा बांच जानते थे, ऐसे मंद बुद्धियों का
निकाला हुवा मत मंद बुद्धि ही मानते है ऋषभदेव
से चला हुवा सनातन धर्म को छोड ऐसा निर्बु-
द्धियों का निकाला मत बुद्धिमान कैसे मान
सकते हैं, ओसवाल श्रीमाल पोरवाल श्रावकों
के वडेरे क्या निर्बुद्ध थे सो उन्हों ने राजा पन
में जती आचार्यों का उपदेश मान जैन धर्म धार
कर क्रोडों रुपये लगाकर जिन मंदिर करवाया
था और अब उन्हों के ही संतान वाले अपने
वडेरे को मिथ्यात्वी ठहराकर आप लोग अकल
दार बनकर उन जिन मंदिरों की निंदा करते
हुये ढूंढकों को उपदेशी बने फिरते हैं. जती लोगों
का उपकार तुम लोगों को भूलना तो योग्य नहीं

था. कारण जती लोग नहीं होते तो तुम लोगों को जैन धर्म मिलना ही कहां था. कैसे २ उपकार जती लोगों ने तुम्हारे पर किया है बादशाही अमल में तुम लोगों को मुसलमीन बनाने का उधम शुरू था. उस वक्त में खरतर गच्छी श्री जिनचंद्र सूर जी ने बादशाह को अनेक चमत्कार दिखला कर तुम लोगों को जैन धर्म पर कायम रक्खा है, दादा साहिब ने कैसे २ उपकार तुम लोगों पर किया है सो कहां तक लिखें राजाओं को प्रति बोध देना और जैन धर्म में कर देना थोड़ी बात नहीं है किसी कवी ने कहा है.

दोहा—नदी नीर और मूर्ख धन सब कोई हर लेत।
बलिहारी नृप कूप की सो गुण विन बूंद न देत॥

जो जती लोग नहीं होते तो सूत्र सिद्धांतों के पुस्तकों का भण्डार कैसे रहने पाता जिस जतियों ने बौद्धों को जीता. जिस जतियों नें वेदांत मती शंकराचार्य को जीता मुसलमीनों का

पंडित मयूर पठान को जीता, जिन भक्ति सूर जी खरतर भट्टारक पूने के पेशवे के सहा नैयायकों की सभा जीती, इत्यादिक अनेक वादियों को जीत कर जैन धर्म कायमरखनेवाले जती हैं. अगर किसी ढूंढक ऋषि ने किसी राजा को प्रतिबोध कर ओसवाल बनाया होय तो बतलाना चाहिये, अगर कोई संस्कृत प्राकृत में ग्रंथ रचा होयतो दिखलाना चाहिये, किसी अन्य मती पंडितों से सभा कर जैन धर्म सम्बन्धी दिग्विजय किया होय तो बतलाइये और तुम्हारे जैसे भोले लोगों को भरमाना क्या सूर वीरता है, सूम लोगों को ढूंढकों का धर्म प्रसन्न पड़ता है इस में ज़ियादा ख़र्च नहीं. अब इस ग्रंथ के भाषा में लिखने का इतना ही प्रयोजन है. भव्य जीव बांचकर सच्च झूठ की परिचा करे, जो सच्चा पच्च होय सो ग्रहण करें, हमारे लिखने में किसी की निंदा से ताल्लुक नहीं सनातन धर्म क़ायम रहे भव्य जीव

सत् मार्ग से तिरे जो न माने उन से भी मित्रता माने जिस से भी मित्रता. लेकिन जीवों को सत्य धर्म के लाभ से उद्धार करना आत्मा जो राम ऋद्धि- सार पद पावे ऐसी इच्छा हमेशा ईश्वर जयवंत रक्खे जतियों का घराना रत्नों की खान है. जिस में से आगू अनेक ज्ञानवान हो गये. जिन्हों के बनाये क्रोड़ों ग्रन्थ मौजूद हैं. विद्यमान काल में जतीत्यागी. वैरागी. ज्ञानवानों में ड। श्री हिम्मत मल जी तथा मुनिः शिवजीराम जी वगैरे कई एक विचरते हैं और विचरेंगे. ज़ियादा नाम लिखने से ग्रंथ बढ़ जाय। ईश्वर भगवंत श्री महावीर स्वामी का शासन अभी साढ़े अठारह हज़ार वर्ष इन जतियों से ही चलेगा. उदय काल अस्त काल. काल का स्वभाव है. जतियों में से ज्ञान क्रिया का बीज नाश होगा नहीं दूसरे सनातन धर्म को छोड़ के कोई कितना ही क्रिया आडंबर दिखावे इमान निश्चय उन आडंबर ने गचे नहीं ॥

दोहा—हम सन्तानी हंस के, है समुद्र में सीर ।
नाडोल्याराचां नहीं जासे छीलर नीर ॥

सर्व देवों की मूर्त्ति को ऐसा बोल के नमस्कार करना श्लोक ॥

भव बीजांकुर जनना रागादि क्षय-
मुपागता यस्य ब्रह्मा वा विष्णुर्वा हरौ
जिनोवा नमस्तस्मै ॥

इति भूमिका:

~~~~~~~~~~~~~~~
~~~~~~~~~~~~~~~

श्री शास्वताशाश्वत जिनचैत्यायनमः श्री धर्मशील सद्गुरुभ्योनमः । श्री वाण्यायैनमः ॥

# अथ सिद्धमूर्त्ति विवेकविलास लिख्यते ॥

---

दोहा ।

आदि देव अरिहंत कूं कर प्रणाम मन शोध । मूर्त्ति पूजा मंडना कहूं युक्ति सद्बोध ॥

वाकिफ़ रहे सब आर्य्य लोगों को कि इस दुःख मानाम पंचम आरा कलियुग के प्रभाव से इस आर्य्य देश में परमेश्वर की मूर्त्ति के अनेक दुश्मन विक्रम संवत तेरह से के करीब पैदा हुवे जब से मुसलमान बादशाहों का अमल दखल हुवा इन के पेस्तर इस मुल्क में कोई भी परमे-श्वर की मूर्त्ति का निंदक मत नहीं था और

छव दर्शन वालों ने अपने शास्त्रों में कहीं भी मूर्त्ति बाबत् बड़े २ बुद्धिमानों ने भी दलील नहीं की सब मतों के लोग मूर्त्ति का वंदन पूजन करते हुवे दिल को उस मूर्त्ति से ठहरा कर ध्यान करते थे जैसे गुण उन देवों में थे सो याद में लाते थे और लाते हैं क्योंकि विना आलंबन याने साकार मूर्त्ति वगैर दिल इधर उधर जाते हुवे नहीं रुकता वह शुभ आलंबन निर्विकार की मूर्ति से संबन्ध रखना है और जो अभी नवीन मतांतरी मूर्ति को निकेवल पत्थर बतला-कर कहते हैं कि इस मूर्ति से कुछ फायदा नहीं ये उन लोगों के अज्ञान पने का निशान है क्योंकि जो लोग स्थापना मूर्त्ति की बाबत अनेक फंद रच के लोगों को सनातन धर्म से भ्रष्ट करते हैं वे सब लोग स्थापना मूर्त्ति से हर क़िस्म का मतलब हासिल करते हैं और सूत्र ने स्थापना मूर्त्ति में दलील करते हैं जैन धर्म के अनुयोग

द्वार सूत्र में लिखा है कि ऐसा कोई पदार्थ नहीं कि जिस में चार निक्षेपे न होते हों वह चार इस मूजब नाम १ स्थापना २ द्रव्य ३ और भाव ४ जिस का भाव निक्षेपा शुद्ध होगा उस के बाकी के भी तीनों ही शुद्ध होंयगे अब यहां पर बहुत से तत्व के अजान धर्मी नाम धरा के निक्षेपे का स्वरूप नहीं जानते हैं सो संक्षेप कर बताता हूं जैसे श्री ऋषभदेव ऐसा नाम १ उन्हों की ध्यानावस्थित पद्मासन योग मुद्रा धारे धातु की काष्ट की या पाषाण की तद्रूप गुणो वाली मूर्ति सो स्थापना २ ऋषभदेव का जो जीव जब से सम्यक्त उपार्जना किया तीर्थंकर होने की नींव डाली वह द्रव्य ३ और केवल ज्ञान केवल लक्ष्मीसंयुक्त समवशरण में विराजमान राग द्वेषादिक अठारह दोष रहित वह भाव निक्षेपा है ४ ये चारों ही निक्षेपे ध्यान स्मरण के वास्ते हैं इन में बहुत से मनोमती नाम निक्षेपे से तो नव लोग

मुक्ति मानते हैं जैसे श्री अरिहंत १ अथवा हे शिव २ हे विष्णु ३ हे राम ४ हे कृष्ण ५ हे अल्लाह खुदा ६ इस मूजव अब जिस का नाम लेते हैं उस ही नाम वाले परमेश्वर की स्थापना मुकर्रर करी गई जैसे चौबीस तीर्थंकर अरिहंत का चैत्य यानें मूर्त्ति ध्यान धारी नाक के अग्र भाग पर धरी है दृष्टि जिन्हों ने ऐसे साक्षात्कार वीतराग की एन शकल उस मूर्त्ति द्वारा उनका बहुमान जल चंदनादिक से द्रव्य पूजा उन्हों के यथार्थ गुणों का वर्णन से उपकारी का उपकार याद करना जिस से अपनी आत्मा तद्रूप गुण युक्त का होना ये तो कार्य हैं और वीत राग की मूर्त्ति कारण है ठाणांग सूत्र में दश सत्यकह्या वहां ठवण सच्चे अर्थात् स्थापना सत्य इसी तरह स्थापना के दो भेद सद्-भूत असद्भूत जिस में विष्णु मत वाले विष्णु की मूर्त्ति शंख चक्र गदा पद्म धारी वैजयंती माला धारी चार भुजों वाली होती है इसी तरह रामचंद्र

की मूर्त्ति जानकी संयुक्त धनुष बाण धारे हुये इसी तरह मोर मुकट पीताम्बर धारे वंशी बजाते राधिका संयुक्त कृष्ण नारायण की मूर्त्ति वा बालक स्वरूप कृष्ण मूर्त्ति होती है ऐसे ही रुद्र जटा धारी गंग धारा शोभित सांपों का धारने वाला अर्द्धांग पार्वती लिया हुवा ऐसे त्रिशूल धारी मूर्त्ति अथवा भगाकार जलहरी से स्थापित रुद्र का लिंग ऐसे भद्र काली चामुंडा देवी अठारह भुजा वाली शस्त्रों की धारने वाली खंड खप्पर धारी दैत्यों को मारती हुई होती है इस तरह संसारी लोगों के अनेक देव गजानन कार्त्तिक सरस्वती इन्द्र हनुमान भैरूं को आदि लेकर अनेक देवों की स्थापना करी हुई है इन्हों के जैसा उन्हों में गुण है वह माफक भाव करके पूजन बहुमान करते हैं जैसा भाव वैसी ही सिद्धि होती है अमृत का गुण ज़हर में नहीं है लेकिन ज़हर का काम ज़हर ही देगा इन

मूर्त्तियों के देखने से देखने वाले को उन देवों के गुण उसी वक्त याद आ जाता है जैसा उन देवों का नाम लेने से गुण याद नहीं आता वैसा गुण मूर्त्ति देखने से तुरन्त याद आता है इस में प्रत्यक्ष प्रमाण ऐसा है कि एक तो किसी भोगी स्त्री पुरुष का नाम लेना तो उतना जीवों के विषय विकार नहीं पैदा होता और एक तसवीर आसन की देखनें से जल्दी चित्त विगड़ विषय विकार पैदा हो जाता है तो फिर थापना मूर्त्ति में गुण या औगुण नहीं ऐसा क्योंकर माना जावे इस वास्ते स्थापना सत्य है दसवी कालिक सूत्र में लिखा है हे मुनि दिवाल पर स्त्री की तसवीर लिखी हुई होय उस को मत देखो सबब विषय राग होने का वह तसवीर कारण है इस बाबत प्रतिवादी तर्क करते हैं स्त्री की तसवीर से विकार पैदा होना अनादि काल का परचय है इस वास्ते उदयिक भाव है लेकिन वीतराग की मूर्ति से

वीत राग दशा जीवों को कैसे आवे इस पर उत्तर ऐसा है जैसे जीव के अनादि जड़ कर्म का संम्बन्ध है उस कर्म के प्रेरणा से कर्मों का संचय कर्त्ता जीव है तैसे ही जीव का निज गुण ज्ञान १ दर्शन २ चारित्र ३ और तप ४ है जानना सो तो ज्ञान १ देखना सो दर्शन २ कर्म का संचय को खाली करना याने काटना सो चारित्र ३ इस वास्ते जीव कर्मों का कर्त्ता बुरे कारणों से जैसे है तैसे ही शुभ कारणों से कर्मों से छूटने वाला भी जीव है अगर ऐसा न मानोगे तो जीवों की मुक्ति सिद्ध नहीं होगी अनेक वस्तुओं का प्रत्यय पाकर अनेक प्रत्येक बुद्ध हो गये हैं इस वजह द्वीपसागर पनत्ती सूत्र में लिखा है कि दरिया मे तीर्थंकर के आकार की मच्छी को देख के बहुत मच्छियां जाति स्मरण ज्ञान से सम्यक्त सहित श्रावकव्रत पाते हैं और थोड़े भवों में मुक्ति पाते हैं इसी तरह जिन मूर्ति के देखने से आद्र

कुमारने सम्यक्त पाकर दीक्षा ली जिस का लेख सुयगडांग सूत्र की टीका में है इस टीका के कर्त्ता श्री शीलांगाचार्य विक्रम संम्वत् सात सौ में हुये हैं और कई एक मनोमत्तीस्व कपोल कल्पित विना शास्त्र के प्रमाण कहते हैं कि श्रेणक राजा के लड़के अभय कुमार ने ओघा मूंपत्ती भेजा था ये बात सरासर झूंठ है अगर सच है तो ग्रन्थ पूर्वा चार्य कृत का प्रमाण बतलाना चाहिये आद्रक देश हमारी समझ से शायद चीन देश का नाम होगा क्योंकि उस मुल्क में गीलास पने से सर्दी ज़ियादा है इस वास्ते वहां मकानों में अफीम पोता जाता है उस आद्रक देश के राजा का लड़का आद्र कुमार को धर्म उपदेश देने को बहुतसी तजवीज सोचने से आखिर में यह नि-श्चय हुवा कि साधुओं का विहार अनार्य देश में हो नहीं सकता इस वास्ते तत्काल ज्ञान प्राप्ती कराने वाली अरिहंत ऋषभदेव की मूर्त्ति पूजा

के उपकरण समेत अभय कुमार ने भेजी उस
मूर्त्ति के देखने से आद्र कुमार को जाति
स्मरण ज्ञान हो गया उसी ही भव में मुक्ति पद
पाया इस का विस्तार सूयगडांग सूत्र में है
ऐसा अद्भुत जिन मूर्त्ति के दर्शन से बोध बीज की
प्राप्ती क्रम से स्वर्ग तथा निर्वाण का कारण समझना
चाहिये जब कोई भी काम बिना थापना के बन-
ता नहीं और थापना मानते चले जाते हैं और
फिर मूर्त्ति को नहीं मानना ऐसा अज्ञानियों को
उपदेश देते रहते हैं ये निकेवल सठपना है अब
थापना मानते हैं उस बात की साबूती इस वजह
है हम सब लोग जुबान से जो शब्द बाहर निकालते
हैं दरअसल में शब्द हमारे मन के ख्यालात ज़ाहिर
करने को स्थापना है जहां तक हम हमारे मन के अभि-
प्राय को वचन थापना से ज़ाहिर नहीं करेंगे तब तक ह-
मारे मन के अभिप्राय को सामान्य जीव नहीं समझ स-
कते हैं क्योंकि मन में जो बात विचारते हैं उसके रूप रं

नहीं है और बिना रूप रंग के वस्तु का ख्याल कैसे लोग कर सकें जैसे जीव आत्मा के रूप रंग नहीं तो उस जीव को अपने लोग नहीं देख सकते हैं और जब इस अरूपी जीव को सरूपी देह की सहायता मिलती है तब चेतन स्वभाव ज़ाहिर मालूम देता है इस वास्ते बुद्धिमानों को समझना चाहिये कि जो चीज़ हमारे पास में मौजूद नहीं है तो फिर आदमी के समझने वास्ते और ज्ञान की प्राप्ति करने को उन २ चीज़ों की स्थापना करने से ही मतलब हासिल होता है जैसे सरकारी कोर्ट कचहरी के न्याय करने के ठिकाने में जब किसी मकानात याने ज़मीन का झगड़ा आपस में वादी प्रति वादी के होता है तब हाकिम याने वह मकान को खुद देख लेगा अथवा उस मकान का नकशा देख लेगा तब तो हाकिम फौरन उस बात को समझ लेता है और जहां तक खुद या नकशा नहीं देखेगा वहां तक हाकिम कभी

नहीं कहेगा कि मैं समझ गया इस प्रत्यक्ष प्रमाण से स्थापना मूर्त्ति सिद्ध है इसी तरह फिर दूसरा प्रमाण स्थापना मूर्त्ति का प्रत्यक्ष पने का देते हैं डाक्टर लोग जब किसी नये विद्यार्थियों को चीरने फाड़ने का इल्म सिखाते हैं तब आदमी के बदन की हड्डी पसली नसों वगैरह का अच्छी तरह ज्ञान कराने को सिर्फ पुस्तक ही से नहीं समझा सकते हैं उस इल्म का पूरा मतलब हासिल करने को मरे हुये मुर्दों को चीर के दिखलाते हैं वह हाज़िर नहीं होने पर मोम के बने हड्डी पसली नसों वगैरह बनाये हुये तय्यार रहते हैं वह दिखलाकर जो किताबों से पढ़ाया जाता है इबारत उस का पूरा मतलब हासिल करवा देते हैं और जहां पर ये सर्व सामग्री तय्यार नहीं वहां फक्त किताबों से पढ़ के चीर फाड़ने का इल्म कभी नहीं आ सकता इसी तरह पर तीसरा प्रमाण देना है कि जब मदरसे

( पाठशाला ) में भूगोल की पुस्तकें पढ़ाई जाती है तव जल का और टापुओं का नकशा बनाया हुआ तय्यार रहता है उन नकशों के देखने से जिस जगह का वृत्तान्त पढ़ाया जाता है तो सीखने वाले के मतलव अच्छी तरह समझ में आ जाता है ऐसे ही कलकत्ते में कोई उम्दा मकान बना हुआ है उस मकान के जैसा ही मकान किसी सरदार को देहली में बनाना हुवा तव उस कलकत्ते वाले मकान का नकशा ( चित्र ) उतारा जावे जिस को इंगलिश भाषा में फ़ोटू कहते हैं उस मकान के नकशे को देख कारीगर वैसा ही मकान देहली में बना सकते हैं ये थापना का प्रत्यक्ष प्रमाण चौथा है इत्यादिक अनेक क़िस्म के थापना मूर्त्ति से होते हुये मनोर्थ सिद्धि प्रत्यक्ष प्रमाणों से साबित है इस तरह से जगत् गुरु जिनराज परमेश्वर के विद्यमान में उन्हीं की मूर्त्ति तद्रूप

वनाई गई उस थापना को देखकर आत्मा को तद्रूप में लीन करना जैसे लट से भमरी का होना ये परमार्थ को जान धर्म के बताने वाले जगत्तारक की मूर्त्ति की जल चंदन पुष्प धूप दीपादिक ज्ञाता सूत्र में लिखी हुई सत्राह भेद से पूजा जैसे इन्द्रादिक देवता करे तैसे ही सूत्र में दी हुई आज्ञा मूजव गृहस्थ धर्मी भाव युक्त करे ये सिद्ध पद की वैया वृत्य है और वगैर सिद्ध परमात्मा की मूर्त्ति के वगैर सिद्ध की वैयावच्च किस वजह हो सकती है और सूत्रों में सिद्ध की वैयावच्च का पाठ है नाम तथा गुण की जो याददास्ती उस को वैयावच्च नहीं कह सकते हैं जहां तक अरिहंत सिद्ध की मूर्त्ति नहीं देखी जावेगी वहां तक सूत्रों से सुना हुवा परमेश्वर के तद्रूप का ज्ञान काय हो सकता है अब ईसाई मज़हब वालों के मत से थापना मूर्त्ति मानना सिद्ध कर वतलाते हैं अव्वल तो इन्हों

में पुराना-मत रोमन कैथलिक पादरियों का है वह तो मूर्त्ति मानते हैं. रहे दूसरे मज़हवी ईसाई ( कृश्चियन ) सो गिरजा घर के ऊपर सूली का चिन्ह बनाते है मकसद इन लोगों के किताबों में ऐसा लिखा है कि ईसा के ऊपर ईमान लाने वाले मनुष्यों के पाप के वदले में ईसूक्रिस्त आप सूली चढ़कर औरों को वचालिया वही सूली का निशान याने थापना ईसा के गुण याद करने को लगाते हैं इस सूली को देखे उस वक़्त धर्म के मालिक का हालत मालूम होकर आस्ता आवे और उस पर ईमान लावे इस तरह से जो कृश्चियों के पुस्तकों पर सूली की थापना करते हैं और कृश्चियन अंगरेज़ लोग खुद कुर्ते के ऊपर और कोट के नीचे गले में कालर पहनते हैं वह भी ईसा को सूली लगी थी जिस की थापना है. इत्यादिक वावतों से कृश्चियनों का मूर्त्ति मानना सिद्ध किया अब मुसलमानों का स्थापना मूर्त्ति मानना सिद्ध

कर बतलाते हैं मुसल्मान लोग जब निमाज पढ़ते हैं तब काबे के तरफ पश्चिम दिशा को मुंह करके पढ़ते हैं तो क्या खुदा पश्चिम की तरफ ही है, क्या पूरब दक्षिण उत्तर में नहीं है. लेकिन वह काबे की थापना पश्चिम में हैं उस के वास्ते हीं उधर मुंह किया करते हैं. दूसरे मुसल्मान लोग मक्का मदीना सहरु की यात्रा याने हज्ज कर आते हैं वह हाजी कहलाते हैं उन हाजी लोगों की जुबानीं सुनने मे आया है कि काबा मे एक पत्थर है उस को मुबारक समझ कर चूमते हैं बोसा देते हैं झुक कर उसके आगे सिजदा याने नमस्कार करते हैं. उस काबे के पत्थर का यह हाल हाजी लोग कहते हैं कि मोहम्मद साहिब के वक्त में यह पत्थर बिलकुल सफ़ेद था और खुदा उस पत्थर में अपना असर डाल दिया था. अर्थात् अपनी शक्ति डाल दी थी जिस क़दर वहां यात्री लोग जाते है उस पत्थर को

पाक समझकर चूमते हैं उस चूमने वाले के पापों को वह पत्थर अपने अंदर खेंच लेता है, यात्रियों के पापों से वह पत्थर काला पड़ता चला जाता है सिर्फ थोड़ा सा सफ़ेद दायरा याने दाग़ रह गया है जब उस पत्थर का काला दाग़ सब में फैल जायगा याने सब पत्थर काला हो जायगा तब क़यामत की रात अर्थात् महा प्रलय हो जायगी उस पत्थर की यात्री लोग परिक्रमा देते हैं यहां बैठे नमाज पढ़ते हैं सो उसी ही पत्थर की तरफ मुंह करके पढ़ते हैं इस पत्थर की यात्रा के वास्ते सैकड़ों रुपये खर्च करके जाते हैं इस बात से मुसलमानों का मूर्त्ति पूजा आमतौर पर साबित है मुसलमान भी पत्थर की ताज़ीम करते हैं और कहते हैं हम बुतपरस्त नहीं हैं अर्थात् हम मूर्त्ति को नहीं मानते हैं क्या इन्साफी बात है. सो अनघड़ पत्थर को खुदा के तौर मानना और दूसरे मज़हब वालों की एन शकल बनाई हुई परमेश्वर

की मूर्त्तियों का तोड़ना फोड़ना इन मन्दिर मूर्त्तियों
का तोड़ना मोहम्मद गज़नवी अलाउद्दीन मोहम्मद
गोरी बादशाहों का बड़ा जुल्म रहा था. ये बात
गूर्जर भूपावली आदि अनेक तवारीखों से साबित
है, बादशाह अकबर की नेक नामी दुनिया में
मशहूर है उसने हिन्दू और मुसलमानों को बरा-
बर अपनी दो आंखें समझता था गुणी के गुण
का ग्राहक बड़ा नेक नाम हुवा. धन्यवाद है वर्त्त-
मान बादशाही अंग्रेज़ सर्कार केसर हिन्द शाह-
नशाह श्रीमती महाराणी विक्टोरिया के राज्य को
सो ताजीरात हिन्द के क़ायदे अध्याय पन्द्रहवें में
मन्दिर मूर्त्ति कबरस्थान वगैरः मज़हबी बाबतों
में मदाखलत बेजा करने और कराने हर्जाना
और बेवजह निन्दा की सजा दो बरस तथा १
बरस में जुर्माने लिखा गया है. दूसरा मुसलमानों
के हज्ज करने पर भी गौर किया जावे तो थापना
मूर्त्ति मानना सिद्ध होता है. क्या खुदा सब जगह नहीं

है सो मुसलमान लोग मक्के मदीने में ढूंढ़ने को जाते हैं लेकिन कावे में जाने का असल मतलव यही है कि इन के दीन चलाने वाले मोहम्मद साहिव की याददास्ती करना है. जैसे मुसलमीन लोग अपने कावे के पत्थर में खुदा की तासीर मान कर अपने पापों का खेंचने वाला समझ के उस पत्थर की ताज़ीम करते हैं वैसे ही जैन धर्म वाले तथा विष्णु मती आदि मूर्त्तियों के पूजने वाले मंत्र से जिनेश्वर देव की शक्ति रूप प्राण प्रतिष्ठा से ईश्वर की तुल्य अपने पापों का हरने वाला थापना मूर्त्ती मानते हैं. जैसे मुसलमान लोग उस पत्थर में खुदाई कुदरत वतलाते हैं, इसी तरह हमारे मध्य देश वासी ब्राह्मण लोग भी गंगा महात्म, केदार महात्म, जगन्नाथ महात्मों में तुम्हारी तरह अनेक बातें लिख रक्खी हैं. तुम्हारे बाप दादों की वनाई बात जैसे तुम लोग सच्च मानते हो तैसे ही ब्राह्मणों के बाप दादों की लिखी

ब्राह्मण लोग सच्च मानते हैं, लेकिन इन्साफ तो यह है कि जो बात न्याय की युक्ति से ठहरे वह सच्चा मानना चाहिये. तब तो युक्ति प्रमाण प्रत्यक्ष प्रमाण से खूब निश्चय भया कि कोई मज़हब ऐसा नहीं सो थापना मूर्त्ति से फ़ायदा नहीं उठाता हो और भी थापना मूर्त्ति मानना सिद्ध कर बतलाते हैं हर साल में मुसलमान लोग ताज़िये बना कर नबी पैग़म्बरो का महात्म करते हैं, छाती कूट २ कर रोते हैं यहां तक कि बहुत आदमी बेहोश होकर गिर पड़ते हैं. क्या यह थापना नहीं है. बीबी के आलम में लोह वग़ैरे धातु का पंजा बना के सामने रखते हैं. क्या यह थापना नहीं है, शुक्रवार को अच्छा दिन समझ के मसजिद में नमाज़ पढ़ते हैं ईद के दिन बड़ी मसजिद में नमाज़ पढ़ते हैं और मसजिद को ख़ाने ख़ुदा कहते हैं. क्या ये ख़ुदा का घर है जिस में ख़ुदा रहते हैं या कभी आके सोते या बैठते हैं ये

मसजिद भी थापना नहीं तो क्या है, कुरान श-
रीफ को खुदा का वचन समझकर ताज़ीम करते
हैं क्या यह थापना नहीं है मुसलमानों के ओलिया
फक़ीर, ख़्वाजा साहिब, मीरा साहिब वग़ैरः की
दर्गाह की मेदनी जाना, जारत करना, क़बरों पर
फूल रेवड़ी चढ़ाना, देगें करनी ये थापना की
पूजा नहीं तो क्या है. ऐसे ही ओलिया फक़ीरों
की तथा मोहम्मद साहिब वग़ैरों की तसवीर
भी रखते हैं और उन्हों का हमेशा दर्शन किया
करते हैं ये सब ऊपर लिखी बाबतें स्थापना मूर्त्ति
है क़ुरान शरीफ की ताज़ीम करते हो तो फिर
एन शकल मूर्त्ति मानते हुये क्यों शर्माते हो,
क्योंकि हरफों के देखने से वैसा ज्ञान नहीं
होता जैसा नकशा या मूर्त्ति के देखने से होता
है, हरफ भी एक क़िस्म के शब्द के समझाने
वास्ते थापना की बतौर है उस में इतना फर्क़
है वह हरफ सीखने से मायना समझने से असर

करके ज्ञान पैदा करता है और नकशा या मूर्त्ति
याजे ऐसे साक्षात्कार होते हैं सो अन पढ़के भी
ज्ञान प्राप्ति कर देता है, जिसका पुरावा हमने पहली
लिख दिया है जिसका रूप रंग नहीं ऐसी अरूपी
वस्तु का ध्यान सामान्य मनुष्य कैसे कर सकते
हैं क्योंकि द्रव्य को साकार पुद्गल थापना के होने
से मूर्त्तिमान होकर फिर नाम कहलावेगा इन
तीनों निक्षेपों के सम्बन्ध में भाव निक्षेप चौथा
जानना. इस पर वादी प्रश्न करता है, जिस परमे-
श्वर के रूप रंग नहीं उन्हों की मूर्त्ति कैसे बनाई
जावे, क्योंकि जैनी लोग ईश्वर तत्व के दो भेद
मानते हैं अरिहंत १ और सिद्ध २ सो सिद्ध
ईश्वर के देही याने रूप रंग नहीं कहते हैं इसी तरह
वैदिक तथा पौराणी भी दश चौवीस अवतारी
विष्णु, तैसे ही रूप रंग रहित निकेवल एक ईश्वर
तैसे ही ईसायों के परमेश्वर के तीन भेद पिता १
पुत्र २ और पवित्रात्मा ३ जिस में पवित्रात्मा के

रूप रंग नहीं इसी तरह कुरानी मुसलमानों के खुदा १ और दूसरा उनका पैंक याने दूत मोहम्मद आदम मूसा वगैरः जिस में खुदा के रूप रंग नहीं, आर्य्य समाजी तथा पारसियों का रूप रंग रहित एक ईश्वर, ऐसे अनेक मतों वाले मानते हैं तो फिर मूर्त्ति कैसे वन सके. इस पर हमारा उत्तर यह है. हे मित्र जैन धर्म वाले अरिहंत को साकार मानते हैं विना साकार मूर्त्तिवंत अरिहंत हुये वगैर मुक्त होता ही नहीं. जिसने शरीर धारके मोहादिक चार घन घाती कर्म क्षय करके केवल ज्ञान पाय धर्मोपदेश दिया, उनकी वाणी जो आचार्यों ने लिखी सो अनेक विद्या का भंडार सिद्धांत कहलाया, सो संसार में चलता है उस अरिहंत की मूर्त्ति जैन धर्म वाले मानते हैं, इसी तरह जो २ देह धारी पुरुष हुये राम कृष्णादिक उन्हों की ही मूर्त्ति है. निराकार ईश्वर खुदा को किसने देखा और जिस ने देखा वह शरीर वाला था, या वे शरीरी रूप रंग

विना का ईश्वर खुदा है. यह बात किसने सनूती के साथ ज़ाहिरा की जिसने अपने ज्ञान से देख-कर प्रकाश करा वह मूर्त्तिमान साकार परम उप-कारी हमारे पूजने योग्य उसकी मूर्त्ति है जैसे एक मुसलमीन सायर ने गाया है. " आदम को खुदा मत कहो आदम खुदा नहीं। लेकिन खुदा के नूर से आदम जुदा नहीं ॥,, तत्व दृष्टि से इसका मायना सोचो तो यही निकलता है आदम जो जीव वह कर्म संयोगी है, इस से खुदा मत कहो लेकिन जब ये आदम कर्म को चय कर देगा तो खुदा का नूर क्या केवल ज्ञान, तो उस नूर से जुदा नहीं अर्थात खुदा है इसी वजह भक्ति मार्ग वाले शैव विष्णु भी कहते हैं ॥ दोहा गुरु गोविन्द दोनूं खड़े किस के लगूं पाय। बलिहारी गुरु देव की सो गोविन्द दिये बताय ॥ तो जगद्गुरु श्री अरिहंत की बलिहारी है जिसने सर्व द्रव्य गुण पर्याय का रूप कह कर मुक्ति मार्ग प्रकाश कर

ईश्वर पद की सिद्धि करी पारसी लोग अग्नि पूजते हैं क्या अग्नि के रूप रंग नहीं है, जो ईश्वर को तेजोमई समझते हैं, तो ईश्वर का तो ज्ञान मई तेज है और अग्नि तो विनासमान साकार पदार्थ है सिर्फ ये भी थापना मूर्त्ति ही है, इस अग्नि की थापना तो जगत् को नाश करने सर्व भक्षक असद्भूत है, जब आलंबन याने विना साकार मूर्त्ति वगैर ध्यान नहीं होता तो जैसे जैनियों के तेजोमई निर्विकारी ध्यान धारी लाल रंग प्राणायाम के योग साधन में अग्नि तत्व रूप सिद्ध की मूर्त्ति जो सिद्ध चक्र यंत्र में है, वह थापना सद्भूत किसी भी जीव को तकलीफ नहीं देने वाली ध्यान के वास्ते ईश्वर सिद्ध ख़ुदा के पूजन को दुरुस्त है, और जो आर्यामत का चलाने वाला तैसे ही और भी कई एक मतों वाले, शास्त्रों के उपदेश देने वाले ईश्वर को निराकार बतलाते हैं, ये बात उन कहने वाले तथा समझने वालों की, समझ की

भूल है, विना ज़ुबान के शब्द सार्थक कैसे बने विना साकार वस्तु वग़ैर शब्द पैदा होता ही नहीं जब आकाश में हवा और पानी के सूक्ष्म परमाणु इकट्ठे होकर बादर पुद्गल होते हैं तब ही गरज गाज होता है, ऐसा कोई भी कारण नहीं है सो साकार विना शब्द निकले तो फिर ये बात कैसे मानी जावे कि विना देह धारी ईश्वर विना निराकार ईश्वर ने शास्त्र का उपदेश किया और साकार क़लम, दवात, स्याही, पन्नों वग़ैर. वग़ैर हाथों के काहे से लिखा, क्योंकि हाथ पांव वग़ैर लिखना कैसे हो सके. इस वास्ते जितने शास्त्रों के उपदेश देने वाले हुये हैं वे सब मूर्त्ति मान ही हुये हैं, उन्हों के वचन हैं सो तो शास्त्र हैं और उन पुरुषों की शकल है सो थापना मूर्त्ति है. यहां मति वादी तर्क करता है, ईश्वर ( खुदा ) ने अपनी कुदरत से दुनिया के सब कुछ चीज़े बनादी इस के उत्तर में हमने ईश्वर तत्व निर्णय

अनादि है. इस पर वादी तर्क करता है. कि वगैर किसी के बनाये कोई भी चीज़ नहीं बनती तो संसार भी वगैर ईश्वर के बनाये कैसे बन गया. इस पर हमारा उत्तर है कि ईश्वर को किसने बनाया. वादी कहता है. कि ईश्वर को कौन बनावे. ईश्वर तो अनादि से आप ही बना हुआ है. इस पर हमारा उत्तर है. कि इसी तरह सृष्टि अनादि से आप ही बनी हुई है ईश्वर को अनादि स्वयं सिद्ध मानते हो तो सृष्टि को अनादि मानते क्यों शर्माते हो सृष्टि में उत्पत्ति स्थिति और संहार इन पांच समवायों से हो रही है. काल १ स्वभाव २ नियति ३ जीव का कर्म ४ जीव का उद्यम ५ इन पांचों बिना मिले कोई भी कार्य नहीं बनता बीज भूत सृष्टि अनादि है, फिर सृष्टि अनादि होने का हम दृष्टान्त देते है. जो जवाब नहीं दे सको तो सृष्टि को अनादि समझ लेना. पहली मुर्गी १ या पहली मुर्गी [illegible]डा २ बताओ. इन दोनों में से पहली

ग्रन्थ बनाया है उस में खूब सबूती के साथ जवाब दिये हैं. ये ग्रन्थ मूर्त्ति मंडन का है किसी भी मत को खण्डन करने से ताल्लुक नहीं रखता. तो भी आपको विचारना चाहिये, कि जिस पदार्थ का कारण नहीं होगा उसका कार्य कभी नहीं हो सकता जैसे मिट्टी, पानी, डोर, चक्र, लकड़ी, ये पांचे कारण जहां तक हाजिर न होगा वहां तक कुम्हार घट नहीं बना सकेगा. इस वास्ते हे! ईश्वर कर्त्ता को एकांत पने से मानने वाले जब पृथ्वी जल आदि सर्व पदार्थ, जीव जड़ पदार्थ नहीं था तो ईश्वर ने काहे की सृष्टि बनाई, क्योंकि ईश्वर और ईश्वर की शक्ति ईश्वर से जुदी नहीं हैं, जैसे तिल और तैल का एकत्वता, जब तैल अलग हो जायगा तो तिल नहीं रहेगा. अर्थात् सार रहित खल कहलावेगा और ईश्वर तथा ईश्वर की शक्ति निराकार है, तो निराकार से साकार रूप संसार कैसे बने इस वास्ते सृष्टि

अनादि है. इस पर वादी तर्क करता है. कि बगैर किसी के बनाये कोई भी चीज नहीं बनती तो संसार भी बगैर ईश्वर के बनाये कैसे बन गया. इस पर हमारा उत्तर है कि ईश्वर को किसने बनाया. वादी कहता है. कि ईश्वर को कौन बनावे. ईश्वर तो अनादि से आप ही बना हुवा है. इस पर हमारा उत्तर है. कि इसी तरह सृष्टि अनादि से आप ही बनी हुई है ईश्वर को अनादि स्वयं सिद्ध मानते हो तो सृष्टि को अनादि मानते क्यों शर्माते हो सृष्टि मे उत्पत्ति स्थिति और संहार इन पांच समवायों से हो रही है. काल १ स्वभाव २ नियति ३ जीव का कर्म ४ जीव का उद्यम ५ इन पांचों बिना मिले कोई भी कार्य नहीं बनता बीज भूत सृष्टि अनादि है, फिर सृष्टि अनादि होने का हम दृष्टान्त देते हैं. जो जवाब नहीं दे सको तो सृष्टि को अनादि समझ लेना. पहली मुर्गी १ या पहली मुर्गी का अंडा २ बताओ, इन दोनों में से पहली

उन जीवों के पुण्य से इस क्षेत्र में पैदा होता है सब तरह के मन वांछित पूर देता है, उन औरत मर्दों की उमर तथा देही बहुत लंबी होती है, ज्यों ज्यों काल बदलते जाता है, त्यों त्यों सब अच्छी २ चीज़ों की क्रम से शक्ति कम होती जाती है, उस जमाने में उन युगलकों में कोई ज्ञानवान पुरुष पैदा होता है तो वह अपनी ज्ञान शक्ति से सब चीज़ों को मनुष्यों के काम में लाता है, जानवरों को पकड़ के जिससे जो मतलब होता है सो हासिल करता है, पक्वान्न विधि खेती नोकरी, लिखना वगैरे सब तरह के हुनर औरत मर्दों के कामिल सिखाता है कोट क़िला बनाकर नगरी बसा कर राज्य नीति कानून चलाता है. अवसर्प्पणी काल के तीसरे आरे के अंत में सात मनु होते हैं, ज़िन को जैन धर्म वाले कुलगर कहते हैं, इस विद्यमान अवसर्प्पणी में सात कुलगर हुये पीछे सातवां नाभि नाम का मनु का

पुत्र मरुदेवी रानी का अंग जात ऋषभदेव ज्ञान वान युग का ईश्वर आदि कर्त्ता पैदा हुवा तब उस परमेश्वर ने संसार का व्यवहार जो अठारे कोडा कोडि सागरोपम से यहां बंद हो रहा था, सो असि मसि और कृषि प्रमुख कार्यों का करने वाला भया बहुत वर्षों के बीतने से सच्चे शास्त्रों के अजान पुरुषों ने निराकार ईश्वर कृत सृष्टि है; ऐसा न्याय से बरखिलाफ अपने मनो कल्पित शास्त्रों में लिखकर लोगों को उपदेश करने लगे, उस ऋषभदेव के सौ लड़के पैदा हुये उन लड़को के नाम से देश बसाया, प्रजा की वृद्धि हिफाजत करने से बहुत भई निज तख्त विनीता (अयोध्या) राज्य भरत बड़े पुत्र को दिया वह चक्र-वर्त्ति पहला राजा भया. आप संसार त्याग आदि योगेश्वर हुवा; तप करके ब्रह्म ज्ञान पाकर सं-सार से तिरने का धर्म बतलाया, साधुओं का १ तैसे ही गृहस्थियों का २ भरत का पुत्र पुंडरीक पहला

शिष्य गणेश पद का धारक हुवा, भगवंत के मुख से त्रिपदी सुनके जिसने द्वादशांग रचा उस द्वादशांग में सर्व विद्या है, उन पुंडरीक गणेश के वचनों को सुन के वहुत से संसारी लोगों ने अल्पज्ञ पने करके उस यथार्थ वचनों में रोचक भयानक वचन स्वार्थ के वस मिलाकर अपने नामों से ग्रन्थ वनाना शुरू करा. जव भरत चक्री ने ऋषभ परमेश्वर के उपदेश के अनुसार चार आर्य वेदों की रचना करी, इस वास्ते ब्रह्माकथित वेद है: ऐसी लोगोक्ति भई भगवान ने सम्यक्त की करणी के भेदों में मंदिर जिन मूर्त्ति करवाना, पुस्तक लिखवाना, संघ भक्ति, रथयात्रा तीर्थयात्रा करने का उपदेश दिया. तव भरत राजा ने अनेक जिन मंदिरों से पृथ्वी तल सुशोभित करा, ऋषभदेव के हुक्म मूजव राजा भरत ने कैलास पर्व्वत पर आगे होने वाले चौवीस तीर्थंकरों की मूर्त्ति सिंह निषधा नाम प्राशाद विश्व कर्मा के हाथ से

बनवाया, सत्रुंजय का संघ निकाल कर उद्धार प्रथम करवाया ये कैलास पर्वत पर मंदिर जो भरत चक्री ने कराया सो अधिकार श्रुत केवली रचित भद्र बाहु स्वामी की आवश्यक निर्युक्ति में है शिलादित्य राजा के सन्मुख धनेश्वर सूरिने. काव्य बंध सत्रुंजय महात्म ग्रंथ आगे बड़ा था. जिस का छोटा बनाया, उस में भरत के संघ के निकाल ने की विधि और सत्रुंजय तीर्थ के उद्धार का निर्णय लिखा है. भरत राजा के कहने से विश्वकर्मा ने मंदिर. धर्मशाला, उपाश्रय, मकानादि बनाने की विधि लिखी हैं. ऐसा पंच वास्तुक नाम का शास्त्र बनाया अभी विद्यमान है, भरत राजा की कराई हुई श्री ऋषभदेव की मूर्त्ति माणक स्वामी के नाम से प्रसिद्ध दक्षिण हैदराबाद से तीस कोस कुलपाक गांव में है जैन मत के शास्त्रों के तत्व के अजान ऐसी शंका करते हैं,-ऋषभदेवजी को हुये असंख्याता वर्ष हो गये और इतनी

मुद्दत तक मनुष्य कृत वस्तु कैसे ठहर सके, इस वास्ते मूर्त्ति के पुजारी लोगों ने भरत राजा कृत माणक स्वामी की मूर्त्ति है, ऐसा झूठा ही नाम धर दिया है. इस पर यथार्थ उत्तर को खूब विचार कर मन कल्पना को छोड़देना है. विवेकी जैन धर्म की शाखा दिगांबरियों को निकले को उन्नीस सौ वर्ष हो गये, इस माणक स्वामी के मूर्त्ति का दाखला स्वेतांवर और दिगांबरियों के दोनों के ग्रन्थों में है. ताड पत्रों पर दूसरा ये प्रमाण है, जिस शंकर राजा ने दरियाव के अंदर से इस मूर्त्ति को लाया और मन्दिर बनाकर मूर्त्ति को स्थापनकरी, जिसका साल संमत थंभे पर खुदा हुवा इक्कीस सौ वर्ष का मौजूद है और जैन धर्म में से प्रतिमाओं का उत्थापक मत निकले लूंपक को चार सौ ही वर्ष हुवा है. तुम्हारे जुबान की दलील सच्ची या हमने लिखत का प्रत्यक्ष प्रमाण बत-लाया सो सच्चा. उस स्थंभ में भरत राजा कृत

ये मूर्त्ति हैं ऐसा लिखा है. तुमने कहा असंख्य वर्ष मनुष्य कृत वस्तु कैसे ठहरे, इसका उत्तर ऐसा है. जंबू द्वीप पन्नत्ती सूत्र में लिखा है, भरत चक्र-वर्त्ती महाराजा दिग् विजय करता हुवा ऋृषभ कूट पहाड़ के पास पहुंचता है, उस पहाड़ पर आगे हो गये. ऐसे अनेक चक्रवर्त्तियों का नाम लिखा हुवा देखके पीछे एक चक्रवर्त्ती का नाम दंड रत्न से छील कर अपना नाम लिखता है. अब विचार करने की बात है, मनुष्य लिखित कृतिम नाम असंख्य वर्ष कैसे ठहर गये. पहाड़ शास्वत हैं लेकिन नाम शास्वत लिखे हुये नहीं हैं, शास्वत होते तो भिसाले नहीं जाते इस वजह मनुष्य कृत परमेश्वर मूर्त्ति असंख्याता वर्ष देव सहाय से ठहर सकती है. फिर इस जंबू द्वीप पन्नत्ती सूत्र में अवसर्प्पणी काल के पहले आरे का वर्णन किया है, सघन वन, वृक्ष, फूल, फलों से सुशो-भित सारस, हंस वगैरे जानवरों से सेवित, बावड़ी

...का प्रमाण देव शक्ति से पलंख्या वर्ष ठहरने में क्या ताज्जुब है. इस में एक प्रत्यक्ष प्रमाण भी है एक वस्त्र को चतुर आदमी हिफाजत के साथ सम्भाल के रक्खे तो वह बहुत काल तक ठहर सकता है. जैसे दादा, गुरु, महाराज, युग प्रधान, श्रीजिन दत्त सूर जी की चद्दर जेसलमेर में अभी तक मौजूद है, जिन्हों को हुये आठ सौ वर्ष हो चुके ये तो प्रत्यक्ष मौजूद है. दूसरे प्रमाण की जरूरी नहीं और लौकिक कहनावट ऐसी है, "कपासिया छमासिया" अब विचारना चाहिये क्या सूत कपड़ा छः महीने की ही उमर धरता है, न्याय से विचारो तो एक २ अपेक्षा से सर्व वच सच्चे हैं, बुद्धिमानों की बलिहारी है. सब नयों एवं भूत नय प्रबल है, लेकिन नैगम शुद्ध अशुद्धादिक बाकी के छव भी अपनी अपेक्षा सच्चे हैं. एकांग अवयव गृहीत अंशो की इस वास्ते असंख्या वर्ष मनुष्य कृत वस्तु

सो जंबू द्वीप पन्नत्ती सूत्र का प्रमाण हम पहली लिख दिया है, इस तरह कैलास अष्टापद के मंदिर भरत कृत शंखेसराजी की मूर्त्ति गई चौ-वीसी में बनी हुई है माणिक स्वामी, धूलेवानाथ, अंतरीक इत्यादिक प्राचीन का लीन इस चौवीसी की बनी हुई मूर्त्ति जाननी. ऋषभदेव का दूसरा बेटा बाहुबल था उसकी राजधानी तक्षशिला वह अब गढ़ गज़नी नाम से प्रसिद्ध काबल की बादशाही है. ऋषभदेव का दर्शन जिन्हों ने किया और जिन २ मुल्कों में ऋषभदेव मुनि होकर फिरा, उस देश के लोग आर्य्य हो गये. बाहुबल की राजधानी में प्रभु पधारे सांझ पड़ गई आने सका नहीं. प्रभात समय बड़े जुलूसी से बाहुबल वन में कुछ देरी से आया प्रभु का नियम था, सांझ पड़े एक जगह खड़े रहना सूर्य उगते विहार कर जाना सो विहार कर गये. बाहुबल ने सारा वन ढूंढ़ लिया, जब ऋषभदेव पिता नहीं मिले

तब जिस जगह ऋषभ देव की ध्यान में खड़ रहे थे, उसी जगह खड़ा रहके कानों में अंगुली डाल "अल्लाह ताला रसूल हक्क या" ऐसा ऊंचे स्वर से पुकारा वह रस्म अब भी मुसलमान लोग मसजिद में किया करते हैं. अरबस्थान में ऋषभ-देव का मंदिर बाहुबल ने बनवाया था. वह मंदिर की मरम्मत सिलसिलेवार जारी रही. आखिर को मोहम्मद साहिब के वक्त में वह मूर्तियां जमीन में उलटाये गई. मंदिर की जगह वह है जिसको मक्का कहते हैं. मुसलमीन लोग मूर्त्ति पूजते थे मोहम्मद साहिब के वक्त से छुड़ाई गई. तवारीखों से साबित है. लेकिन छूट कब सकती है. बाहुबल का बेटा चन्द्रयश हुवा जिससे चंद्र वंश चला. भरत का सूर्ययश हुवा जिस से सूर्य वंश चला. खुद ऋषभदेव को ऊख खाने की इच्छा भई. इस वास्ते इक्ष्वाकु वंश प्रगट भया बाकी युगलक लोगों ने कांस. घास का रस लिया

उमर आठ सौ नौ सौ वर्ष की कहते हैं. हम जानते हैं
कि असली किताबें इतिहास की डूब गई होंगी.
जिस से उन २ देश वालों के पास पिछला इतिहास
है लेकिन जैन धर्म वाले असंख्य वर्षों का इति-
हास बता सकते हैं. इसी तरह भागवत पुराण
में इतिहास के फेर फार से विष्णु का अवतार मान-
कर श्री ऋषभदेव का इतिहास लिखा गया. पुराणों
में बहुत थलों का फेर फार स्वामी शंकर की
वक्त में हुआ दिखता है, जिन्हों को हुये हज़ार
ग्यारह सौ वर्ष हो गया. स्वामी दयानन्द भाग-
वत को बोपभट्ट रचित कहता है, सो सरासर झूठा
है क्योंकि जैनियों के नंदी सूत्र में भागवत पुराण
का नाम लिखा है. दयानन्द जी बोपदेव को
हुये हज़ार वर्ष का लग भग बतलाते हैं और
जैनियों का नंदी सूत्र का लिखने वाला देवर्द्धि-
गणिक्षमा श्रमण को हुये. सोलह सौ वर्षों का
लग भग ज़माना ठहरता है, जैन ग्रन्थों में और

सूत्रों में लिखा हुआ हैं. रुद्र का महोत्सवस्कंद विनायक इंद्रादिक का महोत्सवतमास गीर लोग कर रहे हैं, हज़ारों कौतुकी देखने जाते हैं. माण भद्र पूर्ण भद्रादियक्षों का मंदिर, बलदेव राम का मंदिर, जहां महावीर तीर्थंकर ध्यान धरके खड़े रहे है. इस वास्ते वैदिक मत वालों का मंदिर भी प्राचीन जैन ग्रन्थों से सावित है, शाक्त तथा विष्णु इनके संप्रदाई आचार्य शंकर, रामानुजादिक सहस्र वर्ष के लग भग में हुये, जब से मान पान रामनारायणादिकों के मंदिर का जियादा बधा. आगे हनुमानादिकों की तरह स्थापना मुकर्रर थी, अब जैन धर्म में से निकले हुये मनोमत्ति जो ढूंढक तथा तेरह पंथी परमेश्वर की स्थापना के द्वेषी और उनके बत्तीस सूत्रों को निज कल्पना से मानने वाले थापना का बहु-मान उठाने वाले, लेकिन बग़ैर थापना माने इन का भी काम चलता नहीं सो बतलाते हैं. अव्वल

तो सूत्रों के पोथे पास में रखते हैं. ये परमेश्वर के वचन की थापना नहीं है तो क्या है. पुस्तक भी जड़ पुद्गल हैं नंदी और अनुयोग द्वार सूत्र में श्रुत ज्ञान के दो भेद द्रव्य श्रुत १ भाव श्रुत २ द्रव्य श्रुत वह है. जो पत्र और पुस्तक में लिखा गया. ऐसा सूत्र पाठ है. दव्वसुयंजंपत्तय पोत्थय-लिहियं" उन पुस्तकों की अंदर से जिन चैत्य शब्दों को मन माने कल्पना से उलटा पुलटा कर भोले जीवों को परमेश्वर की थापना से घृणा कराके अपने पंजे में गांठते हे. जंबू द्वीप प्रमुख अढ़ाई द्वीपों के नकशे से लोगों को क्षेत्र का प्रमाण का ज्ञान कराते हैं, ये थापना नहीं तो क्या है. नारकी के वेदना का चित्र पास में रखते हैं औरतों को तथा बालकों को नरक के दुःखों से डरा कर अपने चेला चेली करके सिर मूंड लेते हैं, कहो ऋषि जी थापना से फ़ायदा उठाते हो या नहीं. पंजाबी ढूंढिया अमरसिंह की

तसवीर ( फोटू ) उतार कर तुम्हारे श्रावक लोग पास में रखते हैं, ऐसा हमने सुना है. भला ढूंढक पन्थियो, तीन लोक के पूजनीक परमेश्वर जिन्हों का नाम लेने से मुक्ति मानते हो, जब उनकी मूर्त्ति स्थापना निषेधी, तब तो नाम भी निषेध्या गया. जब नाम और स्थापना निषेधी गई, तब द्रव्य और भाव निषेध्या गया. क्योंकि निक्षेप चारों का समवाय संबन्ध है. अब तुम को सत्यवादी कौन बुद्धिमान कह सकता है, क्योंकि नाम बिना थापना बने नहीं, थापना बिना नाम द्रव्य और भाव ठहरे नहीं तुम लोग, एकान्त नय से जिन मूर्त्ति को पत्थर कहते हो और गणधरदेव श्री सुधर्मा स्वामीजी जीवाभिगम सूत्र में विजय देवता के अधिकार में जिन मूर्त्ति को साक्षात तीर्थंकर कहते हैं सो पाठ लिखा है. "धूवं दाउणं जिनवराणं" अर्थात वह विजय देवता जिन राज को धूप देकर कहा. अब तो वह जिन मूर्ति थी. वा [illegible]

आप थे. गणधर महाराज तो जिन मूर्त्ति को जिनराज ही जानते थे. तब ही तो ऐसा कहा है. उन के वचनों पर तुम को प्रतीति कहां. सच है. तुम उन्हों के परंपरागम संतान होते तो मानते. सो तो हो नहीं. ऐसे परमेश्वर से तुम ज़ियादा. सो तुम्हारी मूर्त्ति के दर्शन से तो लोग मुक्ति चले जावेंगे और जिन मूर्त्ति से नरक जावेंगे. अहम-दावाद से तथा गोंडल से खबर छापे द्वारा पाई है, कि सैकड़ों फोटू के चित्र ढूंढक ऋषों के हमारे पास से बिक गये थोड़े रहे हैं. चाहिये तो मंगालो वाहवा ! ऋषजी तुम्हारा उपदेश और मानने वालों की नमकदारी तुम कहते हो. मंदिर किसी श्रावक ने कराये होय तो सूत्रों में दाखला बतलाओ, तुम ने जिन मूर्त्ति के द्वेष से अनेक सूत्र और ग्रन्थ मानने छोड़ दिये. बत्तीस माने. उन बत्तीसों में जो दाखले हैं, सो पक्षपात छोड़ के देखो, छट्ठा अङ्ग श्री ज्ञाताजी में. द्रोपदी राज

कन्या के अधिकार में जेणेवजिणहरे तेणेवउ-वागच्छइ, उवागच्छित्ता जहां जिन मंदिर हैं, वहां द्रोपदी जावे, जाय करके जैसे सत्राह भेद से द्रव्य पूजा, भाव पूजा में नमोत्थुणं का पाठ पढ्या सो अधिकार सूर्याभदेव की तरह देवढ्ढगणिजी देते है. इसी तरह उववाइउपाङ्ग में चंपा नगरी के वर्णन में जिन मंदिर अनेकों से वह नगरी सुशोभित हो रही है, ऐसा पाठ है व्यवहार सूत्र में जिन मूर्त्ति का दाखला साधू के आलोयण लेने के अधिकार में है. अब जरा तत्व नज़र से देखो ये जिन मंदिर जिन मूर्त्ति किसी सम्यक्ती श्रावक ने करवाये होंगे, तब ही तो थे, अन्य मती जैन धर्म से इतना द्वेष रखते है, सो हाथी से मरना क़बूल करते है, लेकिन जैन मंदिर में जाना नहीं. तो ऐसे मिथ्यात्वी जिन मंदिर कैसे बनवावेंगे. जब तुम जिन मती नाम धरा के जिन मूर्त्ति की हीलना और निन्दा करते हो, तो अन्य

मतियों के तो तीर्थंकर क्या लगते हैं सो उन्हों की भक्ति में लीन होके जिन मंदिर करवावेगा. हां. हमारे श्रावक लोग राजा भरतेश्वर से लेकर संप्रतिकुमार पालादि तक अनेकों ने जिन मंदिर जिन मूर्त्तियां कराई. सो प्रत्यक्ष है. प्रमाण की ज़रूरी नहीं जब भीनमाल में से अलग राज्य ओसियां पट्टन वसी तब उपकेशगछी श्री रत्नप्रभसूरिजी ने आदि ओसवाल वंश बनाया. तब राजा उपलदेव पवार ने सवा लाख राजपूतों के संग श्रावक बनकर शीशे की ईंटों से महावीर स्वामी का मंदिर बनवाया. श्रुत केवली रत्न प्रभसूरि ने अपने हाथ से प्रतिष्ठा करी जिन्हों को हुये चौवीस सौ वर्ष होने आये क्या. ओसवाल लोग कभी कुगुरु के फन्द से भूल गये, होय तो अभी विद्यमान मंदिर व उस पर खुदा हुवा, सालसंवत् देख, दिल में तसल्ली कर लेना. फलवर्धीपुर का गोलछा, पूनमचंद का पुत्र फूलचंद हर साल में

अभी संघ यात्रा करवाता है औरंगाबाद में पद्म प्रभु जी का मंदिर चौवीस सौ वर्ष का बना हुवा मौजूद है. दश पूर्वाधारी श्रुत केवली की प्रतिष्ठा करी हुई, मूर्त्ति दो हज़ार वर्ष की अभी जेनरल कनिंग होम साहिब को मथुरा में बारह वर्ष पहली मिली है, जिस में वासुदेव राजा का संवत् ९३ का अंक है, पाली अक्षर खुदे हुये हैं ओंनमो अरहंत महावीरस्य इत्यादि बावते लिखी हैं. तुम ने तो वह हाल किया, तुम सब सच्च लाख कहो हम एक न माने. यह बात तो ज़रूर है, सो ढूंढक ऋषिजी का मत उस वक्त में नहीं था. नहीं तो उपदेश के गप्पोटे से कभी मंदिर नहीं बनवाने देते और सूत्र लिखती वक्त भी अगर हाज़र होते तो शायद जिन मंदिर वाचक चैत्यादिक शब्द नहीं लिखने देते. लेकिन करें क्या ढूंढक ऋषजी का मत तो विक्रम संवत् सत्तरह सौ में पैदा हुवा जिन को दो सौ वर्ष हुवा, तो भी मनोक्त

मत सिद्ध करने को मूर्त्ति के खंडन के वास्ते अनेक युक्तियों के जाल गूंथ रक्खा है. ऋषि साहिब ने टाल के बत्तीस सूत्र माना है. तो इन सूत्रों में भी बहुत ठिकाने थोड़ा २ मंदिर मूर्त्तियों का दाखला है. हां. ऋषि ढूंढकों में विरला व्याकरण कोश पढ़ा होगा. ऊपर लिखा हुआ. टव्वार्थ बांच के काम चलाते हैं वह अर्थ टव्वे वाले ने खोटा खरा लिखा सो सही मानते हैं. तब सूत्र बांचते वक्त जहां चैत्य शब्द आवे वहां ऋषिजी को अवश्य मृषावाद बोलना ही पड़े. मत के पक्षपात से जिन मंदिर जिन मूर्त्ति वाचक चैत्य शब्द का कहां तो साधु अर्थ कहे. कहां ज्ञान अर्थ व्याकरण कोश से विरुद्ध अर्थ करते हैं. गडर प्रवाही शब्द शास्त्र के अजान श्रावक जी पूज २ करते हैं ऋषिजी कभी व्याकरण कोश से चैत्य का अर्थ साधू और ज्ञान सिद्ध करते तब तो सत्यवादी हो नहीं तो सरासर मृषावादी

हो. चिङ्ण् से चैत्य शब्द सिद्ध होता है, इसी तरह् विश्व कोश में बुद्ध अथवा बुद्ध मूर्त्ति का नाम चैत्य है. हेम अनेकार्थ में चैत्य जिन अथवा जिन मूर्त्ति अथवा जन सभा. अथवा जहां सभा इकट्ठी होय ऐसा जो वृक्ष इतने अर्थ में चैत्य शब्द है. तर्क वाचस्पति बंगाली कृत शब्द-स्तोममहानिधि उस में चैत्य शब्द के ऐसे ही अर्थ किये हैं. तब तो लाचार होकर कहते हैं; मंदिर तो बहुत काल के बने हुये हैं, परंतु उन वीत राग त्यागी को जल, चंदन, पुष्पादिक की द्रव्य पूजा करने में हम हिंसा मानते हैं. हे! वादी वीत रागी जिन राज है, तभी तो पूजा के योग्य है, समव शरण में विराजमान खुद प्रभु को चंपा नगरी के लोगों ने पुष्पादिकों से पूज्या और गुण कीर्त्तिना करी, सो पाठ उवाइ सूत्र में हैं जिस का पार्श्व चंद्र सूरि अप्पेगइया पूअणवत्तिया इस पाठ का अर्थ टव्वे में लिखता है. पुष्पादि वड़े

पूज्या हमारे पास वह टव्वार्थ मौजूद है, समवा-
यांग सूत्र में चौंतीस अतिसय में लिखा है,
जलय थलय अर्थात् जल से पैदा हुये. थल से
पैदा हुये. ऐसे पंच रंगे सरस सुगंधियुक्त
पुष्प गोडे प्रमाण देवता समवसरण में वर्षात करे.
वहां वैक्रिय का पाठ नहीं है, वह पुष्पसचित्त
है, क्योंकि सूत्र पाठ से साचित है, जलाज्जातं जलज,
थलाज्जातं थलज, ऐसा प्रगट अर्थ है, तुम लोगों
से कहते हैं. हम हिंसा में धर्म नहीं मानते तो,
हे ! मित्र हम हिंसा में धर्म कब मानते हैं.
हम को दया इष्ट है. लेकिन जो काम तीर्थंकर
की आज्ञा मूजब किया जावे, सो सर्व करणी
दया में है और उनकी आज्ञा उल्लांघ के जो म-
नोक्त करणी करे सो सब हिंसा है, क्योंकि
जमाली जी ने क्या हिंसा करी थी. संपूर्ण चारित्र
पालते थे, लेकिन ज़रासा हुक्म पर शंका लाने
ही से अनेक भव जन्म मरण करना पड़ा. इस

बात को विचारो. जब तुम नंदी सूत्र मानते हो तो उसका सर्व लेख मंजूर क्यों नहीं करते उस में चौरासी सूत्रों के नाम लिखे हैं, उस में महा-निशीथ कल्प सूत्रादिक तैसे ही अनेक पयन्नादिकों के नाम लिखे हैं, वह सूत्र हाज़िर हैं, फिर बत्तीस २ क्या समझ के पुकारते हो. तैसे ही भगवती सूत्र में टीका निर्युक्ती आदि माननी लिखी है, तुम सूत्रों की पंचागी क्यों नहीं मानते तब कहते हैं, हम तो मिलती बात के बत्तीस मानते हैं. हे ! वादी इन बत्तीस में एक सौ तीन बोल का फेर फार है, सो हमने सत्यासत्य निर्णय के दूसरे भाग में पारख केवलचंद का पुत्र गयवरचंद के प्रश्नों के उत्तर में लिखा है, बत्तीसों में आपस में बहुत फर्क़ है, आपस में मिलते नहीं हैं, सिर्फ़ तुम जिन मूर्त्ति के द्वेष से बाक़ी के सूत्रों को छोड़ दिया है. प्रत्यक्ष प्रमाण है, जो आदमी एक झूठ बोलता है, वह उस

झूठ को सच करने को सैकड़ों झूठ के बटता है. सो न्याय आपने किया है. सूत्रों में कई एक बातें ऐसी हैं सो देखने में प्रत्यक्ष हिंसा है. सो ढूंढी ये तेरह पंथी मानते हैं और करते है. सो थोड़ासा नमूना यहां लिखता हूं. हिंसा करें नहीं करावें नहीं, करते को अच्छा समझे नहीं मन से. वचन से, काया से, तीर्थंकर गणधर और साधू करे. मि भंते उच्चरते वक्त सर्व सावद्यका पच्चरकाण नव कोटी से कर चुके. तो फिर आचाराङ्ग सूत्र में लिखा है. कि जैन की साध्वी पानी में डुवती होय तो साधू नदी में गिर के आप निकाले इस में बहुत लाभ काहा. अब विचारो नदी में गिरने से एकेंद्री से लेकार पंचेंद्री तक असंख्य जीवों की हिंसा है. उस लेख को देख बहुत साधू नदी में गिरे गिरते हैं और गिरेंगे. ऐसी आज्ञा सूत्रों में तीर्थंकर गणधरो ने क्यों दीनी. यह पहला बोल हिंसाश्री १. अब दूसरा बोल साधू गोचरी गये है. जल बरसने लग जावे.

तो उस महा मेघ वरसते में मुनि आप के रहने के उपाश्रय में चले आवे, ऐसी आज्ञा आचारांग तथा निशीथ प्रमुख सूत्रों में तीर्थंकर ने क्यों दीनी. इस आज्ञा को देख वहुत साधू जल वरसते में आये, आते हैं और आयगें. उस में असंख्याता जीव एकेंद्री से ले पंचेंद्री तक की हिंसा है. ये हिंसा आश्री दूसरा बोल २, सूर्याभ देवता ने भगवान के सामने वत्तीस वद्ध नाटक किया. भक्ति भाव से गुण ग्राम गायन किया, राय प्रसेणी सूत्र में भगवान ने इस के सम्यक्त की वहुत तारीफ करी और ताली तथा चिमटी वजाना असंख्याता वायु कायके जीवों की हिंसा है. जव भगवान को सूर्याभ ने नाटक करूं, ऐसा पूछा तव भगवान मौन धारण किया, कारण साधुओं का व्यवहार नाटक देखने का नहीं. दूसरे गौतमादि मुनियों के ज्ञान स्वाध्याय तथा ध्यान में भंग पड़े तीसरे भगवान वीत रागी है, नाटकादि कुतूहल

में अभिलाषा नहीं रखते, इस वास्ते मौन-किया और भगवान इस में उस सूर्याभ के भक्ति भाव का बहुत लाभ जानकर मना नहीं किया, बल्कि इस नाटक गुण ग्रामादिक क्रिया से उस के सम्यक्त की तारीफ करी. यों नहीं कह्या, हे ! सूर्याभ तेने जो यह नाटक किया जिस मे निकेवल हिंसा करी, अगर पाप जानते तो मना कर-देते सुगुरु का धर्म है. पाप करते को मना करना. इस लेख को देख तीर्थंकर की मूर्त्ति के आगे अनेक सम्यक्ति श्रावक लोग नाटक किया और करते हैं. करेंगे. ये हिंसा आश्री. तीसरा बोल ३ कोणिक राजा बड़े जुलूसी से वीर प्रभु को वांदने गया. चतुरंगनी सेना के दल से इस जाने में एकेंद्री से लेकर पंचेंद्री तक असंख्य जीवों की हिंसा है. ऐसी हिंसा की करणी उवाइ सूत्र में हैं. ये सूत्र का लेख देख बड़े २ राजा महाराजा सेठ सेना पति-वांदने को गये. जाते हैं और जायंगे. ऐसी हिंसा करने

की आज्ञा का. चौथा बोल ४, अप्रीति उपजे तो साधू चौमासे में विहार कर जावे, वीर प्रभु छद्मस्थ साधू पने में विहार कर गये, इस सूत्र के लेख को देख चौमासे में बहुत साधू विहार करते हैं, करेंगे, कर गये. चौमासे के विहार में छकाय के जीवों की हिंसा है, ऐसी हिंसा की आज्ञा का पांचवां बोल ५, तीर्थंकर गणधर तैसे ही साधू जावो, आवो, बैठो, फला-ना काम करो, ऐसी आज्ञा देवे नहीं तो फिर भगवान महावीर स्वामी गौतम को कहा, आनंद श्रावकको "मिच्छामि" दुक्कडं दे आवो. देव शर्मा ब्राह्मण को प्रति बोध दे आवो. मृगा लोढे को देख आवो, मालू कच्छ में सिंहा अनगार रो रहा है, उसको समझाय लाओ, साधू गोचरी थंडिल भूमि जाने की आज्ञा मांगे तो देवे. साधू को सावद्य भाषा बोलनी नहीं जाना, आना, छकाय के जीवों की हिंसा होय, उसकी क्रिया

रूप पाप लगे. इस में जीवों की हिंसा है और तीर्थंकर की आज्ञा सूत्रो में लिखी है इस में हिंसा आश्री छट्टा बोल ६. साधू को नदी उतरने की आज्ञा निशीथ तथा आचारांगादि सूत्रों में लिखी है. नदी में उतरते वक्त पानी का ज़ियादा पूर आ जावे तो सामने तट पर जो दरख्त आ जावे तो उस पर चढ़ जाना. इस लेख को देख बहुत साधू नदी उतरे वृक्ष पर चढ़े उतरते हैं, उतरेंगे, ऐसी हिंसा की करनी सूत्रों में क्यों लिखी इस में एकेंद्री से लेकर पंचेंद्री तक की हिंसा है, नदी उतरता साधू काल करे तो आराधक या विराधक ऐसा हिंसा आश्री सातवां बोल ७, जीवा-भिगम सूत्र में तीन प्रकार की चिता कही तीर्थ-कर की १, गणधर की २, साधू की ३, सो इंद्रादिक देवता तीर्थंकर निर्वाण पाये बाद जीव रहित तीर्थंकर के शरीर के सामने भक्ति भाव सेती न मोत्थुणं का पाठ पढ़े, पढ़के चंदन काष्ठ

में अग्नि जलाकर दाह करे. भगवान के दाढ़ दांत इंद्रादिक देवता लेवे उसको ले जाकर माणवक खंभ में रक्खे, उस जगह इंद्राणी से हंसी मसकरी विषय कथा नहीं करे ये अधिकार भगवती सूत्र में है, "निर्जीवहाड" दाढ़ दांत जिनका साक्षात ईश्वर की तरह इंद्र आसात्तना टालता है, जीवाभिगम सूत्र के लेख मूजिब देवता की करणी की तरह बहुत श्रावक लोग साधुओं को जलाया जलाते हैं, जलावेंगे. इस जलाने में एकेंद्री जीवों से लेकर पंचेंद्री जीवों तक असंख्यात जीवों की हिंसा है और हम पूछते हैं, जो ढूंढीये तथा तेरह पंथी मर जाते हैं, उन्हों को उन के श्रावक लोग जलाते हैं, उस जलाने में उन श्रावकों को धर्म हुवा कि पाप जान बूझकर ऐसा पाप साधूजी के वास्ते क्यों करते हैं, कौन से सूत्र में आज्ञा है, कि श्रावक साधू को जलावे जब यहां देवतों की करणी मंजूर कर साधुओं को जलाते हैं, तो

जिन मूर्त्ति पूजा में देवतों की करी. पूजा मूजिव पूजा करने में क्यों आना कानी करते हैं, आगे तो सूत्रों के लेख से साबित हैं. सो साधू के मुर्दे को साधू ही परठ आते थे, ये हिंसा आश्री आठवां बोल ८, साधवियों को दर्वाजा बंद करने की आज्ञा दी, दर्वाजा बंध करते, उघाड़ते एकेंद्री से पंचेंद्री जीवों तक की हिंसा है, ये हिंसा आश्री नवां बोल ९ इत्यादि सूत्रों में और भी है, इत्यादिक सूत्रों के लेख को ढूंढिये तेरह पंथी लोग मंजूर करते हैं और कहते हैं. इन ऊपर लिखे बोल में प्रत्यक्ष में जीव हिंसा तो है लेकिन उन करने वाले के मन परिणाम हिंसा करने के नहीं इस वास्ते उस में तीर्थंकर का हुक्म मानने से बहुत लाभ है. हिंसा से धर्म का फल जियादा है, इस वास्ते सूत्रों का लेख मंजूर है. अब हम आगे इस ही सूत्रों का लिखित आगे लिखते हैं. श्रीराय प्रश्णी सूत्र में सूर्याभदेवता जिन राज की

मूर्त्ति की सत्तह भेद से द्रव्य पूजा जल, चंदन, पुष्प धूपादिक से करी, भाव पूजा में नमोत्थुणं का पाठ से स्तुति करी, जिसका बहुत विस्तार से वर्णन है, १ इसी तरह जीवाभिगम सूत्र में विजय देवता सत्तह भेद से द्रव्य पूजा करी, जिन राज की मूर्त्ति की भाव पूजा में नमोत्थुणं का पाठ पढ्या. २ इसी तरह ज्ञाता छट्टे अंग सूत्र में द्रोपदी राज कन्या जिन राज के मूर्त्ति की सत्तह भेद से पूजा करी, भाव पूजा में नमोत्थुणं का पाठ पढ्या. ३ भगवती सूत्र में चमरेंद्र के अधिकार में तीन शरण कह्या, अरिहंत का शरण १, अरिहंत का चैत्य याने मूर्त्ति की शरण २, साधुओं का शरण कह्या ३, प्रश्न व्याकरण में "तीजे शंवरद्वार में चेइअट्ठेनिज्जरट्ठी चेइअट्ठे कहतां चैत्यार्थे" यहां बहुवचन है. निर्जरा अर्थी साधू चैत्य जो जिन मंदिरों की वैया वच्च करे, वादी लोग चेइअट्ठे शब्द का अर्थ ज्ञान के अर्थे ऐसा

करते है. सो सरासर झूठा है. चेइयट्टे यहां बहुवचन है और ज्ञान के वास्ते यहां एक वचन है. व्याकरण शास्त्र के शत्रु कोश से वेमुख अर्थों के करने वाले जिन वाणी के दुश्मन है. भगवान की वाणी कोश व्याकरण न्यायादिक छः शास्त्रों से संबन्ध रखती है. भगवान प्रश्ण व्याकरण सूत्र में कहते हैं. "कालतियं वयणतियं लिंगतियं" इन विना अर्थात व्याकरण विना पढ़े सूत्रों को पढ़े वह जिन वाणी का चोर वह विशेष करके ढूंढक तेरह पंथियों में है. उपाशक दशा सूत्र में आनंद श्रावक उवाई सूत्र में अंवड सन्यासी श्रावक जिन प्रतिमा टाल और देव को वंदन करने का नियम किया है. भगवती सूत्र में तूंगिया नगरी का श्रावक घर देरासर में स्नान कर तिलक कर पूजा कर जिन मूर्त्ति की फिर साधुओं को वांदने गये है. त्याग किया है पचरंगसेन सूत. प्रेतादिक अन्य देवता का सहाय वांछणा जिन्हों ने ऐसे सम्यक्ती

श्रावक जिन प्रतिमा टाल और देव पूजने से सम्यक्त कैसे रहे और अनेक श्रावकों के अधिकार में सूत्रों में न्हायाकय बलिकम्मा लान कर जिन मूर्त्ति की पूजा करे ऐसा पाठ है. "बलिकर्म्म-यज्ञ यजन पूजा अर्चा" ये सब एकार्थ वाचक हैं. ढूंढिये तेरह पंथी जिन मूर्त्ति पूजा जो द्रव्य से सूत्रों में करनी लिखी, उस में तो हिंसा बताकर छुड़ाते हैं. अब हे! बुद्धिमान पंडितो, जरासा आप लोग विचार कर देखना और इन्साफ करना मत पक्ष को त्याग मध्यस्थ भाव से विचारना थोड़े दिन की जिंदगानी है, सर्व सूत्रों के खंडन के पाप का प्रायश्चित है, झूठ बोलने वाला का प्रायश्चित दंड अनंत संसार में जन्म मरण करने का है. पाप नहीं कोय उत्सूत्र भाषण जिसो ऊपर जो नव बोल सूत्रों के मैंने लिखे हैं, उस में तो वे गिनती के छोटे से लेकर पंचेंद्री तक नीलन फूलन आदि अनंत जीवों के वनस्पति में तो

करने वाले के मन परिणाम हिंसा करने का नहीं. इस वास्ते पाप थोड़ा और लाभ ज़ियादा वह बोल तो इन्हों को मंजूर करना पड़ा. अब देखो जिन प्रतिमा से द्वेष सो इन्हीं सूत्रो के लिखित के अनुसार श्रावक जिन प्रतिमा की पूजा करे. वहां हिंसा आगे कर वतलाई है. हे ! मित्रो ? जिन मूर्त्ति पूजने वाले के मन परिणाम क्या पुष्पादि को के हिंसा करने का है. उसका मन परिणाम परमेश्वर की भक्ति भाव में लीनता है. पूजा कर्त्ता दया धर्मी है. प्रश्न व्याकरण में दया के साठ नाम लिखे हैं वहां "पूया" ऐसा नाम दया का है. लोगस्सउज्जोयगरे चौवीसत्थेमे तीर्थंकरो की स्तुति में लिखा है. कित्तिय. वंदिय. महिया. कीर्त्ति याने कीर्त्तन जो गुणग्राम भाव संस्तव- तिन के योग्य वंदित याने पंचाङ्गादि प्रणामा- दिक सेती वांदने योग्य महिता याने सुर नरों करके अनेक उत्तम द्रव्यों करके पूजित है. हे ! वादी

यहां भाव पूजा में तो कित्तिय पाठ कह्या है और महिया शब्द से द्रव्य पूजा ही सिद्ध होता है, न्यायवान भव भ्रमण से डरने वाले तो शब्द के अर्थ पर दृष्टि देगा, गडर प्रवाहियों के वास्ते इन्साफी का रास्ता नहीं ऊपरली बातों में जैसे थोड़ा पाप बहुत निर्जरा मानते हो. ऐसा ही जिन मूर्त्ति पूजा में मानते क्यों लज्जा आती है, तुम्हारे सैकड़ों श्रावक दूर २ देशावर से अनेक रथ, गाड़ी, ऊंट, घोड़े, रेलों पर चढ़के तुम्हारे वास्ते वांदने को आते हैं, कहो ? इन्हों के आने में एकेंद्री से लेकर पंचेंद्री जीवों तक की हिंसा है या नहीं, जीव हिंसा कर्त्ताें को कह क्यों नहीं देते, कि मत आवो, हिंसा होती है. हिंसा करते को मना नहीं करे सो गुरु ही काहे का है, मना क्यों करोगे. इन गृहस्थों के आने जाने से तुम्हारा मान और कीर्त्तिता दीखती है, तब तो वादी कहते हैं, आने जाने में तो पाप हुवा लेकिन

हम को वंदन किया. उपदेश सुना जिस में लाभ हुवा, कारण से कार्य होता है. हे ! मित्र तुम तो पेश्तर कह चुके हो, जहां हिंसा होवे वहां धर्म नहीं, तो फिर आने जाने में हिंसा है और हिंसा है तव तो आप के कहे मूजब धर्म का लाभ कैसे होगा, फिर तुम्हारे श्रावक वंदना का पाठ कहते हैं, कि हे ! स्वामी कल्याणकारी जो देव का चैत्य याने मूर्ति की तरह पर्युपासना आपकी सेवा करता हूं. अब आप लोगों की बुद्धि में क्या सम्यक्त मोहनी का भ्रम है, सो मुंह से पाठ पुकारते हो. जिस में प्रगट ऐसा अर्थ है, कल्याण जो मुक्ति दायक देव का चैत्य याने मूर्त्ति की जैसी उपासना वैसी आपकी करता हूं, जो कहोगे कि चैत्य नाम साक्षात तीर्थंकर का भी है. सो हे ! वादी यहां देव और चैत्य दो शब्द हैं. देव में तो साक्षात तीर्थंकर चैत्य में सा उन्हों की मूर्त्ति इन दो शब्दों को विचारो सा

की वंदना में तीर्थंकर की मूर्त्ति पूजा के बहुमान की उपमा देते हो और बदलते हो, वह न्याय तुम्हारा हैं, मेरी मा और वांझ वादी कहता है. मूर्त्ति पूजा में लाभ है, तो साधू क्यों नहीं करे. हे ! मित्र रोगी दवा खाता है, निरोगी नहीं खाता, आरंभदो तरह का है, एक तो सत आरंभ दूसरा असदारंभ सत आरंभ तो देव पूजा "साधर्मी वात्सल्य तीर्थयात्रादिक" अनेक किस्म हैं और घर, बाग, बगीचा प्रमुख करावता, जो आरंभ सो असदारम्भ, जो असदारंभी है. उन्हों को सदारंभ गुणकारी है और मुनिराज तो कोई आरंभ में नहीं इस वास्ते द्रव्य के त्यागी को द्रव्य पूजा का आचार नहीं जैसे एक श्रावक "सामायक" लेकर बैठा है, दूसरे आदमी ने उसी मकान में जल बरसते में पानी भरने को कूंडी रक्खी थी, उस पानी में एक दोय मक्खियां पड़के तड़फती है. अब आप बतला दो वह सामायक वाला श्रावक मक्खी

को उस जल में से निकाले या नहीं, निकाले तो अनंता जल जीवों का घात नहीं निकाले तो दया धर्म रहे नहीं, उस वक्त दूसरा खुला श्रावक आया, वह सुखे मक्खियों को निकाल लेवे, इसी तरह असत् आरंभी श्रावक को सदारंभ में जिन-मूर्त्ति पूजना श्रेयस्कर है, दूसरे तीर्थंकर महाराज श्रावक-धर्म १-और साधू धर्म २-दो बतलाया है. तुम दोनों की क्रिया एक कहते हो तो-हम पूछते हैं साधू लोच करता है, श्रावक क्यों नहीं करता. जब वही व्रत साधुओं के पूरा है और गृहस्थ के थोड़ा-है. तो साधू संपूर्ण लोच करता है, तब उस अपेक्षा गृहस्थी को भी थोड़ा लोच करना चाहिये. साधू को रसोई-कर खाने-से नरक-गति कही तो श्रावक भी नरक जायगा, साधू-को कुशील सेवने से नरक गति कही. तो श्रावक भी अपनी स्त्री से कुशील-सेवता है; तुम्हारे कहने से साधू सातवीं नरक जावे तो गृहस्थ पहली

दूजी जावेगा. यातिर्यंच होगा, साधू भीख मांगके हमेशा खाते हैं, तुम्हारे कहे मुजब कभी २ थोड़ी भीख गृहस्थी को भी मांग के खाना चाहिये, इस वास्ते हे ! मित्र गृहस्य श्रावक की और साधू की एक करणी होती तो भगवान दो धर्म नहीं कहते. जो हुक्म सूत्रों में श्रावक को परमेश्वर ने दिया उस मूजब श्रावक करे. साधू को दिया उस मूजब साधू करे. तो ही आराधक नहीं तो विराधक ठहरेगा. महा निशीथ सूत्र में भगवान हुक्म देते हैं, गृहस्थी दो प्रकार से पूजा करे, द्रव्ये और भावे साधू एक भाव पूजा हीकरे. वादी कहता है, प्रश्न व्याकरण के आ-श्रवद्वार में देवल प्रतिमा वास्ते पृथ्वी काया-दिक की हिंसा करे, सो मंद बुद्धि. हे ! मित्र तेरे को सूत्रार्थ का बराबर ज्ञान नहीं है, होता तो ऐसा क्यों बकता, उस जगह मच्छी पकड़ने वाले चिड़ी पकड़ने वाले, या क्रूर कर्मी के

करने वाले, बहुत म्लेच्छ जाति के सर्व यवन जाति वालों को सूत्र कार कहता है. वहां श्रावकों को नहीं कहा है. श्रावक तो जिन मंदिर करानें वाला बार में देव लोक जाय ऐसा महा निशीथ सूत्र तथा आवश्यक सूत्र की निर्युक्ती में लिखा है. वादी कहता है, जिन मूर्त्ति तो जीव रहित है इस के वंदन पूजन में क्या लाभ है, हे ! वादी हम तेरे को पूछते हैं साधु के सत्ताईस गुण हैं, उपाध्याय के पच्चीस, आचार्य के छत्तीस. तो क्या पाठ पर वैठते ही तुम्हारे पूज जी में आचार्य के छत्तीस गुण आ गये. सो आचार्य कहते हो, इसी तरह जब गृहस्थ हैं उसको साधू वंदना नहीं करते और न आहार पानी देते और न मंडल मे जिमाते तो क्या दीक्षा देते ही उस मे साधू के तद्रूप. गुण आ गये, सो साधु वदना करते हैं और संभोग करते हैं, जैसे दीक्षा देते. गृहस्थी में साधू के गुण आ जाते हैं, इसी तरह अर्हत की

मूर्त्ति में प्रतिष्ठा बाद अर्हत के गुण आ जाते हैं, जो जिन मूर्त्ति में जीवन मानेंगे तो भगवती में जंघा चारण विद्या चारण साधु चैत्य वांदते हैं. शास्वत और अशास्वत सो जीव वांदेया अजीव को जीवाभिगम सूत्र में देवता भगवान की दाढ़ दांत पूजे आसातना टाले सो जीव की टाले या अजीव की जंबु द्वीप पन्नत्ती में ऋषभदेव के निर्वाण पाये, बाद शरीर की पूजा करी. सो जीव की करी, या अ-जीव की अन्तगड दशा में गजसुक माल के शरीर की देवतों ने पूजा करी. सो जीव कि, या अजीव की कहां तक लिखे बहुत बोल हैं. थोड़े में ही बुद्धिमान समझ सकते हैं, इस वास्ते जिन प्रतिमा में प्रतिष्ठा बाद जिनेश्वर देव की तुल्य गुण भाव निक्षेप आरोप है. जो नहीं मानोगे तो उपासक दशा सूत्र में आनंद जी हरिहर ब्र-ह्मादिक की मूर्त्ति का बहुमान निषेधा उन मूर्त्ति में जैसे हरिहरादिक का साक्षातकार भाव से

वंदन, पूजन से मिथ्यात मानते हो तब तो जिन मूर्त्ति साचात तीर्थंकर सम्यक्त दाता माननी हुई उस आनंद की वक्त में खुद विष्णु तथा ब्रह्मा तो थे नहीं और देखो तीन ज्ञान के धनी श्री ऋृषभदेव आदि तीर्थंकर ने लिखना प्रमुख पुरुषों की बहत्तर कला, औरतों के चौसठ गुण खेती और शिल्प विद्या, प्रजा के हित के वास्ते उप-देश दिया, आजीवका निर्वाह के वास्ते क्योंकि आजीवका होय तो चोरी वगैरे व्यसन नहीं करें फिर श्रेष्ठों का पालन और दुष्टों को सजा, धर्म स्थिति रखने के वास्ते भगवान पहली राज्य नी-ति धर्म चलाया क्योंकि जहां अच्छी राज्य नीति होय वहां ही धर्म ठहरे और धर्म ठहरने से जीव वध, झूठ, चोरी, वगैरे व्यसन नहीं होय तब जीवों की नरक योनि मिटे, इस वास्ते राज्य नीति धर्म नीति की जड़ है. जब पंचम आरे के अंत में पहली राज्य नीति नाश होगी, लगते ही धर्म

नीति नाश हो जायगी, इस वास्ते वड़े पुरुषों की प्रवृत्ति सव जगह उपकारी होती है. वहुत गुण अल्प दोष जानकर के ही तीन ज्ञान के धारण हार खुदने राज्य नीति चलाई इसी तरह मल्लि-नाथ तीर्थंकर अपने नव मित्रों को प्रति वोधने को अपने जैसी सोने की पुतली वनाकर नित्य रांधे हुवे अन्न का एक २ ग्रास उस पुतली के मस्तक में रक्खा हुवा, छेद में डालते थे. कहो कितने जीवों का घमसांण हुवा होगा, ये अधि-कार ज्ञाता सूत्र में है. सुवुद्धि मंत्री ने राजा को प्रति वोधने खाई का गंदा जल, खुशवूदार किया. कितना ही जीव हिंसा हुवा होगा, लेकिन ये सव स्वरूप हिंसा है. इसका वंध नहीं है, भगवती जी में लिखा है, "शुभजोगपडुच्च अणारंभा" शुभ-योग में प्रवर्त्तता जीव को आरंभ नहीं, तो जिन पूजा शुभयोग है, इस में हिंसा का वंध नहीं, जैसे नदी उतरतां जल के जीवों पर साधू का

दया के परिणाम हैं, वैसे पूजा करता गृहस्थ का पुष्प फलादिको के जीवों पर दया का परिणाम भक्ति में लीनता है. सूर्याभदेवता नाटक करती वक्त भगवान से ऐसी अर्ज करी, "अहन्नांभंते देवाणुप्पियाणं भत्ति पुव्वयंगोयमाइस मणाणं नि-ग्गंयाणं वत्तीसइवंद्धनट्टविहंउवदंसेमि" ऐसा पाठ है, सूर्याभ के जिन भक्ति प्रधान है और भक्ति का फल उत्तराध्येन में मुक्ति का शोधकपना सर्व कार्य के साधने वाली कही है उन्तीस में, अध्येन में. भगवती में इंद्रादिक देवतो ने प्रभु सन्मुख नाटक किया. जिनका बहुत अधिकार है जीवाभिगम सूत्र में बहुत देव्यांभुवन पती में उप-जों सबों को सूर्याभ की भलावण है. ठाणांग सूत्र में नंदीश्वर द्वीप के शाश्वता सिद्धायतन का वर्णन वहां चारों निकायका देवता देवीयां जिन पूजा करता थका अट्टाइमहोच्छव करते हैं. उन देवता देवियों को तीर्थंकर आराधक कहते हैं. तो

आराधकता वीत राग की पूजा करणी की भक्ति से ही कही है, उस देव भव में पंच महा व्रत्त तथा वारे व्रत्त तो है नहीं, निकेवल थापना जिन की पूजा नाटकादिक भक्ति से ही आराधकता कहा है, इस वास्ते द्रव्यादिक पूजा में धर्म है तभी तो आराधक कह्या. पाप होता तो विराधक कहते. तो फिर तुम लोग पाप कैसे कहते हो, वादी कहता है, देवता तो नोधर्म्मिया उनकी करणी हम नहीं मानते. हे ! मित्र ये तेरी मूर्खाई है, जिनेश्वर देव तो ठाणांग सूत्र में कहते हैं, पांचवे ठाणे में जो देवतों की करणी नहीं माने, उनका अवरण वाद वोले वह जीव अनंत संसार में रुले फिर तुम देवतों की करणी नहीं मानते तो संजम क्यों लिया है, अगर संजम पालते होंगे तो जरूर देवता होंगे मुक्ति तो इस समय में है नहीं फिर तो देवता पने में अगर सम्यक्ती देवता होवोगे, तब तो जिन मूर्त्ति की पूजा करना ही होगा

किस वास्ते देवता होने की करणी करते हो
इतना नहीं विचारते सो तीर्थंकर महाराज तो
आदमी से देवतों का विवेक ज़ियादा बताया दशवें
कालिक सूत्र में पहली गाथा में कहा जिनका मन
सदा धर्म मे प्रवृत्ते उसको देवता भी नमस्कार
करे, तो मनुष्य की तो बात ही क्या बहुत देवतों ने
साधु श्रावकों को प्रति बोध दिया है. धर्म में उद्यम-
वंत किया है. जीवाभिगम सूत्र मे सिद्धायतन के
विषे बहुत चारों निकायों के देवता तीन चौमासा
तैसे ही संवत्सरी के विषे भगवान के पंच कल्याण-
कों के विषे पूजादिक अट्ठाई महिमा करे. अन्य दिन
होके अब विचारो सम्यग् दृष्टी श्रावकों की और
समकिती देवतों की भगवान ने एक करणी कही
है. या नहीं है और देवतों को [illegible] कहा
है. सो [illegible] धर्म की अपेक्षा आश्री कहा है.
सम्यक्त्व आश्री नहीं. तथा [illegible] सूत्र में देवतों
को [illegible] कहा है. इस वास्ते [illegible]

देवतों की करी भई जिनराज की पूजादिक को धर्म करणी नहीं माने सो मिथ्यात्वी, मिथ्यात्वी देवता जिन भक्ति करे नहीं किया होय तो अधिकार बतलाओ महा कल्प सूत्र में लिखा है. छत्ती शक्ति साधू जिन मंदिर का दर्शन नहीं करे तो तेले का दंड श्रावक को उपवास का दंड है. सिद्धों की वैया वच्च करणी व्यवहार सूत्र में लिखी है. जंघा चारण विद्याचारण मुनि तीर्थ वंदना करने को लवधि फोरके जावे, सास्वत चैत्य वांद के फिर यहां आय के अशाश्वत चैत्य वांदे शीघ्र पने उड़ता जो प्रमाद गति करे, अथवा रास्ते में जो जिन मंदिर रह जावे, उस बावत जो मन में खेद होवे सो आलोयणा लेवे, कुछ तीर्थ बंदना की आलोयणा लेवे नहीं ये तो साधुओ का धर्म है. गोचरी वगैरे जो काम के वास्ते बाहिर जावे, तो आलोयणा लेवे गोचरी की नहीं लेवे किंतु इर्यापथ के हिंसा की लेवे; ऐसा तीर्थ बंदना का महा फल

जानना. जैसे आचारांग सूत्र के दूसरे श्रुतस्कंध की तीसरी चूलिका की अंत की गाथा में तीर्थंकरों की कल्याणक ज़मीन अष्टापद गिरना गादिक तीर्थों को नमस्कार गणधर देव जी ने किया है. जंबूद्वीप पन्नत्ती में तीर्थंकर की प्रतिमा को तीर्थंकर जैसे ही जान के गणधर देव जी नमस्कार करना कहा है. हे ! मित्र हम तुम से पूछते है. पैंताल्लीस लाख योयन का मनुष्य क्षेत्र है और पैंतालीस लाख योयन का ही मुक्ति स्थान है. उस जगह तुसभर ज़मीन खाली नहीं है कि जहां पर अनंते सिद्ध नहीं होय और तुसभर ज़मीन मनुष्य क्षेत्र में बाकी नहीं सो जहां से अनंते सिद्ध मुक्ति नहीं गये होय. इस मनुष्य क्षेत्र में जल भूमि तो कितनी और थल ज़मीन कितनी समुद्र और नदियां मिला के जल भूमि ज़ियादा है. थल भूमि थोड़ी है. अब विचारने की बात है उन समुद्र नदियों में से मुक्ति जाना

इन जंघा चारण विद्या चारणों का तीर्थ वंदना करने को जाते हुये का ही होता है तुम तो कहते हो जहां हिंसा है वहां धर्म नहीं, तो फिर जल में गिरते तो तुम्हारे कहे मूजब हिंसा करते अंत कृत केवली होकर अनंते जीव मुक्ति कैसे गये. जाते हैं और जायगे. लेकिन हे! मित्र तीर्थ वंदना करने के चढ़े है. शुभ परिणाम जिन्हो के ऐसे विद्याधर साधुओं के मन परिणाम हिंसा के नहीं इस वास्ते हिंसा स्वरूप करके थी. अनुबंध हिंसा होय तो मुक्ति नहीं जा सकते, इस वास्ते तीर्थ वंदन का महा फल जानना शत्रुंजय तीर्थ शास्वत है, जिसका नाम ही शत्रुंजय है जिसके ऊपर अनंत साधु मुक्ति गये. ऋषभदेव पूर्वनि नाणुवार जिस पर समवसरे थे ऐसे सूत्रों में लेख है. ज्ञाता सूत्र में थावच्चा पुत्र सुकशेलकादि मुनिशत्रुंजय पर मुक्ति गये. इस वास्ते मुक्ति स्थान है, जो तीर्थ ऋषभदेव के वक्त में भी था और अभी

मौजूद है. तो फिर शास्वता है इस में क्या शंका रही. ऋषभदेव को हुये असंख्या वर्ष हो गया, इसी तरह अजितनाथ से लेकर पार्श्वनाथ तक बीस तीर्थंकर समेत शिखर पर मुक्ति गये. इत्या-दिक तीर्थों के वंदन पूजन का महा फल जानना हिंसा २ पूजा की बाबत् क्या पुकारते हो आज्ञा में धर्म है, देखो साधु मुनिराज तीन करण तीन योग से सब जीवों के हिंसा को छोड़ी है. लेकिन इस प्रतिज्ञा के बरखिलाफ़ वह भी हिंसा करते हैं. लेकिन उनके मन परिणाम हिंसा करने के नहीं मुनिराज फ़ज़र में उठके पडिकमण करते हैं. उस में हाथ पांव हिलाना पड़ता है. खमासमण देने में मुख पत्ती पडिलेहने में वायुकाय के जीवों की विराधना होती है. वस्त्र की पात्र की पडि-लेहण करते हैं. भूमि खूदते २ दिशा जंगल जाते हैं. फिर २ के घरों से आहार पानी लाते हैं. चलते हैं. फिरते हैं. थूकते हैं. खाते खान

लेते हैं, छींक लेते हैं, देशना देते हैं, देशान्तरों में नदी नाले खूंदते हुये जाते हैं, ये सब काम यत्न से करते हैं, तथापि क्या असंख्या जीव नहीं मरते हैं, इस वास्ते क्या साधु एक ठिकाने रहे नाक, मुख, गुदा को क्या खेंच के बांध लेवे, क्योंकि वायु स्वर निकलने के रास्ते में जीव हिंसा होती है. अगर नाक, मुख, गुदा को वस्त्र से बांधे तो जिनाज्ञा का विराधक जिनमती नहीं वह मनोमत्ती है, कुलिंगी है. ऊपर जो बातें लिखीं है उन में न तो केवल पाप है नहीं केवल पुण्य है, व्योपार के माफिक इन क्रिया के करने से मोक्ष रूप नफा मिलता है. किंचित् पाप से बहुत पुण्य है. इस वास्ते जिनराज परमेश्वर की भक्ति बहुमान रूप द्रव्य भाव पूजा में हिंसा कहते हैं, सो ढूंढकों ने मनोकल्पित फंद खड़ा किया है, वीतराग की मूर्त्ति पूजा से धर्म सिद्ध है कोई वादी कहता है ? मूर्त्ति मण्डन भी हठ है और

मूर्त्ति का खराडन भी हठ है. ये बात बुद्धिमान ज़रा गौर करेंगे, तो ख़बर होगा ये वचन कैसे बेवकूफ़ी का है. जब खराडन है, तब तो मंडन का हठ ठहरेगा और मराडन है तब तो खराडन का हठ ठहरेगा. दोनों का हठ बताने वाले को सरासर मूर्ख समझा जायगा, जो जैन के सूत्र मानेगा उसको तो चार निक्षेपे और सात नयतों ज़रूर मानने होंगे. तब तो जिन मूर्त्ति जिन सदृश मानकर द्रव्य और भाव पूजा दोनों ही मानना होगा और सूत्र नहीं मानेगा. उसके वास्ते युक्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण मूर्त्ति के सिद्धी का मौजूद है. अन्याई का सो मनोमत है. कलियुग के अवतार परमेश्वर के मूर्त्ति के निन्दक उनके उपदेशित शास्त्रों के निन्दक इन बाईस टोल ढूंढकों की उत्पत्ति वंगचूलिया सूत्र में लिखी है. वह सब लक्षण इन्हों में मिलते हैं. पूर्वधर आचार्य कैसे अतिशय ज्ञानी थे उन्हों ने जो पहली कहा

सो सव लक्षण इन्हों में आय मिला ढूंढिये तेरह पन्थियों के प्रश्नों के उत्तर समाधान सूत्र पाठ संयुक्त हमने सत्यासत्य निर्णय ग्रन्थ के दूसरे भाग में वहुत विस्तार से दिया है. इस ग्रन्थ में वड़े वहुत होने के सवव सुत्र पाठ ज़ियादा नहीं लिखा है. इस में जो २ दाख़िले भाषा में लिखे हैं वह मज़कूर सूत्रों से है, विवेकीत पास लेना इति नानक साह वाले एन शकल मूर्त्ति को नहीं मानते हैं, लेकिन थापना तो यह लोग भी मानते हैं दस गद्दीधर नानकजी से लेकर हुये, अन्त का गद्दीधर गोविंद सिंह हुवा, इन दसों ने जो जो पुस्तकें वनाई उन ग्रंथों की थापना को परमेश्वर तुल्य मानते हैं. वड़ी २ सवारी ग्रंथ साहिव की निकालते हैं, वड़े २ मकानों में पलंग पर ग्रंथों को रखते हैं, नाच रंग ताज़ीम पुस्तक की करते हैं, ये भक्ति सव स्थापना की है, चाहे कैसा ही करो उन पुरुषों की याद करने को पुस्तक की

थापना है. इन नानक साहिब ने जैनी सूफी तथा किरानी याने मुसलमीन इन तीनों में से थोड़ी थोड़ी बात लेके अपना मत चलाया था, इस वास्ते इन तीनों को मारफातिया लिखा है पांचवीं गद्दी पर अर्जुन सिंह हुवा, उसने अपने ग्रन्थ में जैन धर्म की तारीफ करी है. कबीर पंथी एन शकल परमेश्वर की मूर्त्ति को नहीं मानते. लेकिन थापना माने सिवाय इनका भी काम चलता नहीं है, कोई तो कबीर की गद्दी पूजता है कोई खड़ाऊं मानता है, उनका बनाया बीजक का कोई पुस्तक मानता है. दादूजी वाले दादूजी की थापना तथा उनके वाणी का पुस्तक मानते हैं. इसी तरह स्वामी नारायण वाले राम नामी मान भाव इन्हों में कई एक एन शकल मूर्त्ति को नहीं मानते, लेकिन कृष्ण महाराज की वंशी और मुकुट की थापना मानते हैं. देखो इन लोगों की मूर्खताई सो एन शकल मूर्त्ति को छोड़ के

के थे उस की व्युत्पत्ति नहीं हो सकती है. वह शब्द व्यास के कहने से निदान करके प्रमाण से सिद्ध है, आखण्डल इन्द्र, साम्राट् याने राजा इत्यादिक जा-नना और बहुत शब्द तो सार्थक ही हैं. इस वजह रामसनेहियों के चार ठिकाने मुख्य शाखला हरि रामदास खेड़ापे में रामदास रेण में दरियाव साहपुरे में रामचरणदास ये चारों ही अव्वल में मूर्ति के निंदक निकले थे. लेकिन धारना तो यह भी मानते हैं गुरु की वाणी का पुस्तक सर मानते हैं. साहपुरे में रामचरण से कहते हैं जहां बैठके बहुत दिनों तक राम २ लिया था. इस थंभे को मानते हैं. क्या यह थंभे की धारना नहीं है. अब तो बहुत से रामसनेही वाल्मीक तुलसी कृत रामायण भागवत वगैरे बांचने लगे गुरु के फरमानो से बदल गये हैं. रामजी की मूर्ति नारी दने मिलने हैं लोगों की अच्छी गोकुल गुसाइयों की तरह इन्हों की छिपाके रखनी

है, इस वास्ते गांव २ में रामदुवारे जम गये हैं, इन लोगों में अनपढ़ों की संख्या ज़ियादा है, फक्त राम २ करने से सब कुछ मिल जाता है कृष्ण राम की मूर्त्तियों को नहीं मानते मूर्त्ति को निकेवल पत्थर ही कहते हैं, औरत जो पति की सेवा करे जिस में ये लोग पाप मानते हैं, एक दोहा ऐसा भी कहते हैं.

**पंडताई पाने पड़ी, यो पूरबलो पाप। राम भजन बिन मानवी, रहगयो रीतो आप ॥**

इस वचनों से मालूम हुवा कि ज्ञान के भी ये दुश्मन हैं. विना पंडिताई विना राम क्या चीज़ है, ऐसा मनुष्य क्या जान सकता है क्या मिश्री २ कहने से मुंह मीठा हो सकता है, सो फक्त राम कहने से मुक्ति हो जायगी. इन्हों ने गवारों के सामने पेट का साधन करने को राम नाम का आसरा लिया है, विना ज्ञान संयुक्त क्रिया के विना सत्पद नहीं मिलना है, जो राम

तुम्हारी टेर सुनेगा तो पांच इंद्रियों के तेईस विषय को त्याग क्षमादिक दश प्रकार के यति धर्म को धार, र में तो ऋषभदेव म में महावीर इन दोनों के आदि अक्षर से बना, जो राम शब्द सो उन्हों की मूर्त्ति के सद्धान से मन को एगाग्र करो. फिर तो एकवा रही राम कहोगे. तो खेवा पार है. क्योंकि ये बात दुनिया में प्रसिद्ध है

राम २ सब कोइ कहे, दशरत कहे न कोय ।
एकवार दशरत कहे तो, कोटि यजन फल होय॥

दश जो जती धर्म उस में रत होके कोई राम नहीं कहता है अगर कहें तो कोटि वेर उन ईश्वर की यजन कही ये पूजा का फल मिले वह दश यति धर्म का नाम ऐसे हैं. क्षमा १ कोमल परिणाम २ सीधापना ३ निर्लोभता ४ बारे प्रकार का तप ५ संयम सो सत्रह भेद का ६ सत्य वचन ७ अंतर आत्मा की शुद्धि ८ पर निंदा तथा धर्म साधन के उपकारण विना सर्व

संग्रह का त्याग ९ ब्रह्मचर्य १० इन्हों का विस्तार सीखना होय तो किसी पंडित जती से सीखना इन धर्मों का देश व्रत या सर्व व्रत होना उनको जैन धर्म वाले चारित्र कहते हैं, एक भोजगने कलियुग रासा बनाया है जिस में ऐसा दोहा लिखा है ॥

**सुणज्यो कलियुगतणी निशानी, कवियां देखी जिसी बखाणी । विष्णु मत में रामसनेही जैन धरम में ढूंढ्या ॥ मूर्त्ति शास्त्र धर्म का निंदक ये कलियुग का मुड्या सु०**

अब हमारे देखने में एक दयानंद नाम का पूरुष जिसने आर्या समाज इस नाम का मत चलाया. गुजरात देश में कापड़ी जो नाच करने वाले भवइये लोग होते हैं, उन पतित उदीच्य वंश का पैदा हुवा था. इसके बाप ने महेश्वर देव की मानता करी थी, तब दयानंद जी जन्मे थे.

वड़े हुये नाचना गाना सीखे फिर काई दिनों तक नाचने का काम करते रहे. फिर घर से निकले संस्कृत का अभ्यास करा. जब विद्या का अजीर्ण भया. सत्यार्थप्रकाश नाम का एक जाल रचा, उस में बहुत बातें विरुद्ध लिखी: जैनियों को नास्तिक लिखा जिस पर पंजाब गुजरां वाले के ठाकुर लाल ओसवाल ने वड़े २ प्रश्नों के जवाब रजिस्टरी द्वारा मांगा: दयानन्दजी यथार्थ उत्तर कुछ नहीं दिया. अंत में स्वामी जी से जैनियों ने अरोबरू चर्चा मांगी. दयानन्दजी ने कुबूल करी. अंबाले में मुकर्रर दिन पर जैनी लोग दोनों श्रावगी और ओसवाल हाज़िर हुये दयानंदजी का पक्ष झूठा था. सभा में हाज़िर हुये नहीं. जैन लोग राह देखकर पीछा लौट आये: आख़िर को दयानन्दजी फिरते २ राणा जी के उदयपुर आये. वहां पर तपागच्छ के झवेर सागर जी ने दयानन्दजी से मुकाबला चाहा. कहला भेजा या

तो तुम जैन मत को नास्तिक अपने बनाये सत्यार्थप्रकाश में लिखा है, सो सबूत कर बताओ, नहीं तो दो श्लोक चावार्क नास्तिक मत के तुम ने लिखा है, वह किस जैन ग्रन्थ का है सो बतलाओ, अगर आपने मत के घमण्ड में आके झूठा ही लिखा है तो इन श्लोकों को अपने कल्पित ग्रन्थ में से निकाल डालो, दयानन्दजी के पास में पैसे का ज़ोर था कुछ राणा साहिब की मदद समझ के इस बात को गिनारी नहीं तब पंडित जवाहिर सागर ने अपने उपाश्रय के "साइन बोर्ड" लगाया, जिस में लिखा दयानन्द जैन धर्म की बाबत हम से चर्चा करे नहीं तो हार मानकर अपने झूठे मत को छोड़ देवे. दया-नन्दजी ने चर्चा तो करी नहीं कारण ऐसा कौन है सो सच्चा जो जैन धर्म सनातन दया मूल सर्वज्ञ के कहे हुये को नास्तिक कहे, लेकिन जैन के तत्व का जानकार होना ही मुशकिल

है. वड़े २ षट् शास्त्री, वेद पाठी, गौतमादिक, चौवालीस से ब्राह्मणों थे सो जैन धर्मी हो गये, सज्यंभव, भद्रबाहु, हरिभद्र, जयघोष, विजयघोष वेद वेदांग के पारंगामी जैन धर्म के तत्व को जानते ही अनेक ब्राह्मण जैन हो गये. मलय-गिरी गुसांई अनेक वेदांती जैन जती हो गये जिन्हों के वनाये स्याद्वाद के अनेक ग्रन्थ मौजूद हैं. दयानन्दजी राणा जी से पुकार करी, जैन जती हमारी इज्जत को कलंकित करता है. राणा जी ने काहा मैं "साइन बोर्ड" उतरा दूंगा लेकिन ये खवर रहे कि ऐसा राजपूताना राजस्थान कोनसा है, सो ओसवालों का अमल दखल विना का होगा. एक ओसवाल ने साधूजी से काही साधू जी एजेंट साहिब के वंगले पहुंचे. साहिब ने कुर्सी देकर सत्कार कर पूछा पूज्य का आना कैसे हुआ क्योंकि विद्वान् अंगरेज लोग वहुत करके जानते हैं. कि जैन जती सव भेष वालों

से अव्वल हैं, साधू जी ने सब हकीकत कही. एजेंट साहिब बड़े नेक थे, आप उपाश्रय आके "साइन बोर्ड" वांचकर हुक्म दिया कि क्या कसूर है किसी का कि "साइन बोर्ड" उतारे. दयानन्दजी सच्चे हैं तो इन्हों से चर्चा कर लेवे तब दयानन्दजी दूसरा सत्यार्थप्रकाश बनाया नास्तिकों के बनाये दो श्लोक निकाल डाले अगले सत्यार्थप्रकाश और नये में बहुत फेर फार किया लेकिन नया बनाया उस में भी पूर्वा पर विरोधि अनेक वचन हैं. मैं मनुष्य हूं इत्यादिक अपनी भूल कबूल करी, सिर्फ सरकारी एनमेंडर कर धन्य २ अंगरेजी राज्य के कानून को सो क्या इन्साफी बात साहिब ने कही. शेर बकरी एक घाट पानी पी रही है, न्यायवन्त राजाओं का यही धर्म है, प्रजाहित कारणी साम्राट महारानी विक्टोरिया का राज्य जयवंत रहो. दयानन्दजी वेदभाष्य मनो कल्पित बनाकर, अपने पूर्वाचार्यों को नामी

झूठे पोप इत्यादिक ठहराया दयानन्दजी का पूरा अहवाल देखना होय तो सरावगी अग्रवाल जैन जियालालजी कृत दयानंद छल कपट ग्रंथ देखलेना मूर्त्ति राम कृष्ण वगैरह का बड़ा निंदक दयानन्दजी वेद मत वालो में प्रगट भया, इन्होंने जैसी राम, कृष्ण, रुद्र, देवी वगैरों की निंदा करी और फ़जीता किया, वैसा शायद किसी ने भी नहीं किया होगा राम कृष्ण के मूर्त्ति के पुजारियों को सत्यार्थप्रकाश मे लिखा है, अरे पुजारियो ! तुम लोग कृष्ण मूर्त्ति के दर्शन लोगों को रानियों संयुक्त कर वाते हो, अगर कृष्ण महाराज हाज़िर होते तो तुम को कैसी सज़ा देते, स्वामी जी के लिखने से कृष्ण राम के जैसी ही मूर्त्ति कृष्ण राम की ठहर गई, कारण जो कृष्ण महाराज अपनी मूर्त्ति को पत्थर जानते तो सज़ा क्यों देते जब अपने नाम स्थापना की मूर्त्ति जानते तब ही तो गुस्से में शायद आते लेकिन सज़ा देना तो किसी तरह

उन्हों की बेअदबी मूर्त्ति से करते तो देना सम्भव होता मूर्त्ति का बहुमान अपना देख ज़रूर दिल में खुश होते, ऐसा हम जानते हैं. कारण मुम्बई में विक्टो-रिया महाराणी की मूर्त्ति की किसी बेईमान ने चौपन की साल में बेअदबी करी थी, जिसको पकड़ के सर्कार ने कैसी सज़ा करी थी अब तो विचारो उस मूर्त्ति की भक्ति से महाराणी प्रसन्न क्यों नही हो-यगी अब बुद्धिमान विचारेगें, गवरन्मेंट महाराणी की मूर्त्ति को पत्थर जानती तो बेअदबी कारक को सज़ा क्यों देती रामचन्द्र वनवास पधारे, तब क्या जानकी संयुक्त राम के दर्शन लोगों ने नहीं करे होंगे, क्या अन्य लोगों को बुलाके नहीं दिखाये होयगे कृष्ण क्या व्रज में रहे तो गोपांगनाओं के संग में रास विलास कर्त्तों को लोंगोंने नहीं देखे होयगें अलबत्ते आपने तो उन्हों के मूर्त्ति की बहुत बेअदबी करी है. इन्साफ से तो सज़ा वार हो मूर्त्ति में नाम राम कृष्ण का है, जैसे एक के नाम की

चिट्ठी दूसरा खोल लेवे तो सर्कार सज़ा क्यों देती है लेकिन जिसका नाम है उसका मालिक वही है, इस वास्ते दूसरा खोले तो सज़ा वार है उस चिट्ठी में नाम स्थापना है, या आप है. विचारना चाहिये दयानन्दजी भी थापना मूर्त्ति मानने से बचे नहीं हक्नाहक थापना मूर्त्ति की निंदा करके लोगों को सत्य धर्म से भ्रष्ट करने का उद्यम किया है. ये हम भी कहते हैं सैकड़ों बाते जैन धर्म की मिलती अबी भी कहीं हैं. ऐसे तो सभी मतों में दो चार बातें सत्य जैन धर्म की ग्रहण करी हैं वह तो त्याग. दया सत्य ब्रह्मचर्य वगैरह अच्छे को अच्छा कह सकते हैं. पहले दयानन्दजी इक्कीस ग्रन्थ वेद मत के सच्चे माने थे. जब प्रति वादियों ने उस ग्रंथों में गलतियां निकालना शुरू करा. त्यों २ स्वामी जी का विश्वास उस ग्रंथों का उठता गया. आप स्वपक्ष स्थापक वेद संहिता की पुस्तक को कथंचित् सत्य मान्ना है. कहो

आर्य भाइयो ? पुस्तक जड़ रूप मनुष्य लिखित ये वचन थापना नहीं तो क्या है, आप कहते हो मूर्त्ति को ताला लगाकर कोठे में वंद कर दी जावे तो आप से बाहर नहीं निकल सके भला स्वामी जी जिन पुस्तकों को आप ईश्वर कृत सच्च मानते हो वह पुस्तक ताले मे बंद कर दी जावे तो आप से बाहर निकल सके या नहीं. आप कहा है, मूर्त्ति पर चूहे मूत जाते हैं चोर चोरी कर ले जावे तो जब मूर्त्ति अपनी रक्षा नहीं कर सके तो उनके मानने पूजने वालों की क्या हिफ़ाज़त कर सकेगी. भला स्वामी जी जिन पुस्तकों को आप ईश्वर कृत मानते हो उस में तो ईश्वरी कुदरत होनी चाहिये, क्या उन पुस्तकों पर कुत्ते को मूतते को, चोर चुराते को, पुस्तक मना कर सकती है अनन्त शक्तिवान के वनाये. अगर आप के वेदादिक शास्त्र होते तो ईश्वरी कुदरत होती मूर्त्ति को आप जैसे मनुष्य कृत मानते हो वैसी ही

मनुष्य कृत आप के वेदों की पुस्तक हैं, अभ्यास करने से जैसा शास्त्र होता है वैसा ज्ञान बुद्धि माफिक होता है, जैसे ज्ञान और ज्ञानी का संबंध है तैसे ही जैसे की मूर्त्ति होगी उसके आलंबन अभ्यास से तद्रूप गुण की प्राप्ति अपने परिणाम जैसे होंयगे वैसी ही अध्यवसाय की वृद्धि होगी क्योंकि ध्याताध्येय का सम्बन्ध है. आपका वेद ईश्वर कृत है तो हम को ज्ञान क्यों नहीं करता जो कहोगे. कि ईश्वरोक्त भावना के पढ़ों तो ज्ञान होगा तो स्वामी जी आपका शास्त्र ईश्वर कृत है इसकी अधिकताई क्या अभ्यास से तो सर्व शास्त्र अपने २ बोध का असर करता है. जब अभ्यास से असर होता है. तब तो वीतराग की मूर्त्ति पर श्रद्धा लाके उन परमात्मा के गुण विचारो ज्ञान की प्राप्ति हो जायगी. जो कहोगे कि मूर्त्ति जड़ है क्या हमारी आत्मा जड़ हो जायगी स्वामी जी पुस्तक भी जड़ है. तो क्या पढ़ने वाले जड़ हो

ज़ांयगे, जो कहोगे प्रत्यक्ष में लोग पुस्तकों से सिद्धी पाते हैं स्वामी जी पुस्तक से नहीं पाते हैं, अपनी बुद्धि और अभ्यास से सिद्धी पाते है बुद्धि हीन को शास्त्र ज्ञान नहीं करता सो ही चाणक्य नीति में लिखा है "बुद्धि बोद्यानिशास्त्राणि" इति वचनात् इसी तरह भारत में द्रोणाचार्य की मूर्त्ति के अभ्यास से सहस्र वेंधी बाण विद्या भीलने विना द्रोणाचार्य के सिखाये सिद्ध करली जैसा परिणाम और जैसा शुभ अशुभ मूर्त्ति का आलंबन वैसी सिद्धी जाननी. दोनों में बुद्धि की प्रबलता काम देती है, आप कहते हो पत्थर की गाय से क्या दूध का लोटा भर सकता है, तो हम पूछते हैं गाय २ ऐसा जाप करने से क्या दूध का लोटा भर जाता है सो आप ईश्वर के नाम से मुक्ति कहते हो ,कारण से कार्य का उपचार हैं, सो मूर्त्ति और पुस्तक दोनों कारण जानना आधार भूत है. जैसा मन मूर्त्ति साकार से ठहर कर

उन के गुणों की स्मरण रूप ध्यान होता
वैसा सिर्फ नाम से मन कभी नहीं ठहरता औ
मन को वस करना असली मुक्ति का यही रास्त
है. जो कहोगे आगू अनंत लोग मुक्ति गये सो क्य
उन्हों ने मूर्त्ति द्वारा ही मन वस किया था.
मित्र ! मन वस करने को ज़रूर किसी न किस
शुभ वस्तु का आलंबन करके ही मुक्ति गये.
भाव ! शुद्ध होने से ही मुक्ति होनी है. दान
शील, तप और भाव इन तीन के करने में मुख
भाव है सो ही नीति चाणाक्य कहता है. "धा
पाषाण दारूनां कृत्वा मूर्त्ति निवेशयेत् यथा भावो तथ
सिद्धि तस्य देवो प्रसिदति । न देवो विद्यते काष्टे न
पाषाणे न मृन्मये भावेषु विद्यते देवा तस्माद् भाव
हि कारणं " इन वचनों से भाव सिद्धि मूर्त्ति में कह
है जो स्वामी जी ने मूर्त्ति नहीं मानी तो सत्यार्
प्रकाश में यज्ञ करने के पांच पात्रों की मूर्त्ति
क्यों लिखी क्या अपने समाजियों को बिना मूर्त्ति

नहीं समझा सके, पहला चित्र वेदी का, दूसरा प्रोक्षण पात्र का, तीसरा प्रणीता पात्र का, चौथा घृत की थाली का, पांचवां चमचे का, क्या स्वामी जी ये मूर्त्ति नहीं है. यज्ञ यजन शब्द पूजा वाची है आप अग्नि को जड़ मानते हो और उस में घृतादिक वास्तु हो मने से वायु साफ़ होती है, ऐसा आप मानते हैं, इस यज्ञ में ईश्वर की पूजा क्या हुई, जड़ वस्तु अग्नि की पूजा हुई और हवा साफ़ करने का मतलब निकाला वस्तु हवन करते हुये वेद के मंत्रों से ईश्वर की पूजा मानना तो फिर आर्य वेदों के मंत्र से वीतराग की मूर्त्ति में पूजा करते हुये ईश्वर की पूजा क्यों नहीं मानते सच्चा यज्ञ इस पूजा का ही नाम है, वह पूजा मूर्त्ति द्वारा ही हो सकती है, आपकी मानी हुई मुक्ति ईश्वर अचलताई पद की नहीं है, आप मुक्ति गये जीव का फिर संसार में जन्म मानते हो, कौनसा कर्म बाक़ी रहा सो मुक्ति गया जीव फिर संसार में

आ पड़ता है, कर्म विना जन्म मरण कैसे जीव कर सके, और कर्म है, तो मुक्ति कैसे कहा जावे क्योंकि मुक्ति का अर्थ ही छूटना कर्मों का है, मुच्यते कर्म बंधनात" इति मुक्ति ऐसे संसार में फिरने वाले मुक्ति मानने वाले को उनमत्त क्यों नहीं कहना चाहिये, जैसे गोकुल संप्रदाइयों का गो लोक. ईसाइयों का सातवां आसमान और मुसलमीनों की बहिश्त, शंकर मत वालों का शिव लोक. जैन का स्वर्ग, वैसी आप की मानी हुई मुक्ति पहली कहे हुये सर्व मत वादी उस स्थान पर गये हुये को असंख्य और संख्य काल से पुनर संसार का आना कहते हैं. लेकिन जैन के पन्नवणा सूत्र में सिद्धपा हुड़ा प्रमुख ग्रंथ में जो मुक्ति का स्वरूप कहा है हम तो वह मुक्ति ईश्वर को सिद्ध परमात्मा मानते हैं. जिसका कर्म बंधन से छूटे बाद नि- जन्म मरण नहीं. ज्ञान कर के सर्व व्यापक है और अचल अक्षय ज्ञानानन्द है. आप

लोगों ने मुक्ति ईश्वर का स्वरूप जाना ही नहीं सो स्वर्ग ही को मुक्ति मान ली, आप वेदादि शास्त्रों के कहने वाले को निराकार कहते हो, ये कहना आप का प्रमाण रहित युक्ति शून्य है, तब फिर आपने कहा ईश्वर निराकार ने चार ऋषियों को प्रेरणा कर के उन्हों के मुख से वेद प्रकाश कराया. जिस के शरीर नहीं वह काहे से प्रेरणा करे, जिन के देह नहीं उसके मन भी नहीं होता और मन विना इच्छा नहीं तो फिर निराकार की प्रेरणा से वेद वनाये कैसे सिद्ध होवे और जो तुम्हारे ईश्वर ने चार ऋषियों के मुख से प्रेरणा करके वेद प्रगट करवाया, तो तुम्हारा ईश्वर हमारे मुख से वेद प्रकाश क्यों नहीं करवाता. क्या वह चार ऋषि सगा संबन्धी थे, ईश्वर के और हम नहीं हैं क्या तुम्हारे ईश्वर में शक्ति नहीं सो उन्हों से करा सका और हम से नहीं करा सकता. जो कहोगे उन चारों का हृदय साफ़ था तो हम कहते हैं

उन्हों का हृदय साफ़ किसने किया, जो कहोगे उन्हों
अपने तप से किया था तो हम कहते हैं उन्हों को
जब ज्ञान ही नहीं था तो तप काहे से किया,
जो कहोगे कि अज्ञान से किया तो विचारो अ-
ज्ञानी का हृदय साफ़ होता है, ऐसा कौन बुद्धि-
वान कह सकता है और जो अज्ञान तप से हृदय
साफ़ होता है तो तुम्हारे ईश्वर ने वेद बनाने का
परिश्रम क्यों उठाया सारे जीव विना वेद के साफ़ भी
हो सकते थे, जो कहो कि उन ऋषियों को ज्ञान
था जिस से तप करा था तो विचारो जब विना
वेद के बनाये उन्हों ने ज्ञान संयुक्त तप करा था
तो विचारो आप के ईश्वर ने वेद बनाने का मिह-
नत क्यों करा क्योंकि विना वेद ही लोग ज्ञान
युक्त तप करने समर्थ थे. दूसरे जो कभी ये कहोगे कि
उन्हों ने पूर्व जन्म में तप करा था, वह विचारने
की बात है तुम कह चुके हो सत्यार्थप्रकाश में
सृष्टि रचने के पहले ही वार में इन ऋषियों के मुख

से वेद प्रकाश कराया इस तुम्हारे ऋषियों का पूर्व जन्म मानने से इस के आगू भी सृष्टि थी ऐसा सबूत हो चुका तो फिर सृष्टि का प्रवाह अनादि मानते क्यों शर्माते हो सृष्टि में छः द्रव्य अनादि है पांच समवायों से सब काम की सिद्धि है, ये ईश्वर को पहचानना और ईश्वर कृत सृष्टि मानने वालों का शंका समाधान देखना हो तो हमारा बनाया आप्त परीक्षा ईश्वर तत्व निर्णय ग्रन्थ देखो. अगर कभी तुम्हारे ईश्वर ने बिना तप किये ही उन ऋषियों का हृदय साफ़ कर दिया हो तो हमारा भी क्यों नहीं कर देता, जो कहोगे ऐसा करता नहीं तो फिर तुम्हारा ईश्वर सर्वशक्तिमान है और जगत का कर्त्ता कैसे है, जब हम करते हैं वैसा पाते हैं तब तो कर्त्ता भोक्ता और मुक्ता सब जीव ही ठहरा कर्म सहित है तब तक जीव है, कर्म रहित होने से मुक्त ईश्वर है आप मूर्त्ति उत्थापक मत वाले लोग कहते हो पत्थर की मूर्त्ति है सो पत्थर

में क्या गुण है, आप लोगों ने कभी सुना होगा पारस नाम का एक पत्थर होता है लोहे को सोना बना देता है, चिन्तामणि नाम का एक छोटासा पत्थर होता है उस में कैसी कुदरत होती है, सो मनोकामना सर्व पूर्ण करने की सर्व शक्ति रखता है और अनेक जाति के पत्थरों की मणियां होती हैं. जिन्हों में नाना प्रकार के गुण वैधक शास्त्र के निघण्ट में लिखा है. कांच भी एक जाति की मिट्टीहै जिससे दूर्बीनादिक बनते हैं ऐसे अनेक फ़ायदे जड़ में हैं, प्रत्यक्ष प्रमाण करके चित्रावेल एक जाति का काष्ट होता है जिस में अक्षय पदार्थ करने की शक्ति है ये जड़ पुद्गल देवाधिष्टत होने से अथवा निज शक्ति करके, अनेक शक्ति जड़ पत्थर और काष्ट में हैं, हमारे ईश्वर तीर्थंकर वीतराग मुक्त हैं सो पूजक भक्तों पर न तो प्रसन्न होते हैं और निंदक पर अप्रसन्न नहीं होते लेकिन भक्ति जो उन परमात्मा की द्रव्य भाव से करे, उसके परि-

गाम शुद्ध होकर स्वर्ग सुख क्रम कर के मोक्ष सुख होता है और भव आश्री मनोवांछित तो उन परमात्मा के अनेक शाशनाधिष्टित जक्ष यक्षणी आदि पूर्ण कर देते हैं, जैसे कल्प वृक्ष पास जो आदमी कू कम्बाकम्म मांगने वाला महा मूर्ख और निर्भाग्य होता है, तैसे ही तीर्थंकर सिद्ध परमात्मा की सेवा करके जो पुत्र धन स्त्री आदिक संसार सुख मांगता है, वह मूर्ख निर्भाग्य है. और कहते हो मूर्त्ति मनुष्य कृत हैं यह मानने पूजने योग्य कैसे हो सके, ऐसा कहना मूर्खताई का है, जैसे मूर्त्ति मनुष्य कृत है ऐसे सन्यासी जती ढूंढिया प्रमुख वेस भी मनुष्य कृत है, तो ये भी वंदने योग्य नहीं चाहिये. पहले दयानन्दजी गृहस्थ थे तब कोई भी नहीं वंदता और पूजता था. जब स्वामी जी ने सन्यासी भेष पहरा तब परम हंस परिव्राजकाचार्य बजने लगे और लोग वंदन पूजन यथोचित करने लगे, कहो मित्र ?

मनुष्य कृत वस्तु में पूज्य अपूज्य पना है या नहीं काभी दयानन्दजी को पुलिस मैन का काला कपड़ा पहना कर हाथ पर सारजंटी का बिल्ला लगाकर दश पंद्ररह सिपाही संग कर दिये जाते तो स्वामी जी को लोग जमादार कहते या नहीं दयानन्दजी वही थे. फिर मनुष्य कृत वस्तु से ऐसा पूज्य अपूज्य भाव है या नहीं वही मनुष्य खुल्ला फिरता है कोई नहीं मानता और उन ही को राज्य सिंहासन राजा बना दिया जावे तो लोग उसको गरीब परवर अन्नदाता ईश्वर रूप खमा २ कहते हैं या नहीं इसी तरह जिस देव की मूर्त्ति को अपने ईश्वर पद मे मंत्र प्रतिष्ठा से स्थापन किया. तो उनके पूजने वाले का भाव उस नाम वाले ईश्वर का है. पत्थर का नहीं जो कभी कोई पुरुष अपने स्वभाव से राजा को. हाकिम को. आचार्य को मानेगा. उनको हवा में बुराई का [illegible] [illegible] है. ये बात प्रत्यक्ष प्रमाण से सिद्ध है इन बातें

ही सर्व शास्त्रों के कर्त्ता श्री सुधर्मागणधर अपने द्वादशांग सूत्रों में "सिद्धायतन" जिन गृह ऐसे नाम से ही जिन मंदिरों को लिखा है, अथवा चैत्य करके लिखा है, ज़रूर से वहां सिद्धों की और जिनराज की मूर्त्ति की स्थापना ही है, लेकिन चार ज्ञान के धरने हारने मूर्त्ति में और सिद्ध जिनराज में अंतर नहीं माना है और बुद्धि हीन आधुनिक जो पुरुष मूर्त्ति में और ईश्वर में दूजागरी मानते है जिसका फल बुरा मिलेगा. दयानन्दजी पुराने सत्यार्थप्रकाश में पृष्ठ २१ पंक्ति २६ में नाम करण संस्कार में लिखा है, जल से अंजली भरके सूर्य के सामने खड़ा रहकर ईश्वर की प्रार्थना करे और आप सूर्य चन्द्र को जड़ माना है, तो फिर जड़ वस्तु के सामने ईश्वर की प्रार्थना करना कबूल करते हो तो फिर मूर्त्ति से क्यों इन्कार करते हो. नानकजी, कबीर, दादू जी, रामसनेही, ढूंढिये वगैरे इन लोगों को स्वमीजी ने

संस्कृत विद्या के अजान मूर्ख लिखा है. इस वास्ते इन्हों ने अपनी कुतर्क कल्पना से भाषा के ग्रंथ बना के मूर्त्ति की निंदा करी है. लेकिन आपको तो आर्य लोग बड़े पंडित बतलाते हैं. तो आपके दिल में ऐसी कुतर्क कैसे पैदा हुई सो वीतराग की मूर्त्ति को भी कबूल नहीं करा इतनी तो खूबी करी. सो जैन मूर्त्ति तीर्यों की निंदा तो नहीं करी. लेकिन ऐसा लिखा. मूर्त्ति कहां से चली? जैनियों से. जैनियों ने कहां से चलाई? अपनी मूर्खताई से. जैनी तो किसी तरह भी मूर्ख नहीं ये मूर्ख पना दयानन्दजी का ही है. सो मूर्त्तियों की निंदा करी. इस में तो शंका ही क्या है. जब सृष्टि में कला कौशल्यता और संसार मर्यादा राज-नीति ऋषभदेव ने गृहस्थ पने में चलाई और राज्य त्याग ज्ञान तप करके केवल ज्ञान उत्पन्न भया तब जैन धर्म चलाया. इस वास्ते संसार में सर्व धर्मों से पहले का जैन धर्म दया मूल विनय मूल

और आज्ञा मूल है, तब मूर्त्ति जैनियों से चली इस में तो शंका ही क्या है, इस वास्ते दयानन्द जी पंडितों में नहीं अर्द्धदग्धों में थे. राजा भर्तृ हरि ने लिखा है कि पंडित को समझाना सहज है मूर्ख को समझाना भी हो सकता है, ज्ञान लव करके दुर्विदग्ध उसको ब्रह्मा भी नहीं समझा सकता. आर्य समाज नाम का मत चलाया सो नये ढंग का बहुत थल वेदभाष्य का ऐसा बनाया कोई पूर्वाचार्य ने इस वेदों का ऐसा अर्थ नहीं बनाया और नहीं सनातन वेद धर्मी दयानन्दजी के भाष्यकों कोई सच्चा मानते हैं. मानते हैं वही जो सनातन दया मूल धर्म को नहीं जानते हैं और अंगरेजी पढ़के जो कोई कृश्चियन बनने को तय्यार हुये हैं, इतना उपकार तो आप लोगों पर जरूर किया है सो ईसाई कृश्चियन होते को रोक कर अपना ही बना लिया. विश्वकर्मा प्रकाश मकान मंदिरादि बनाने का शास्त्र किसी ऋषि

का बनाया हुवा है, उस में विष्णु गृह रुद्रालय ब्रह्मा के नाम से जिन मंदिर बनाने का क्रम लिखा है. दयानन्दजी शायद नहीं मानते होंगे अपनें मन में आई सो बात मानी, बाकी छोड़ देना ये स्वामी जी का मुख्य धर्म था किन ग्रन्थ में से कुछ बात कुछ कृश्चियनों की कुछ वेद स्मृति की कुछ जैन धर्म की बात लेकर कुछ वक्त की चाल चलन से इस वजह का मत खड़ा किया. मनुस्मृति को मानकर पुराने सत्यार्थप्रकाश में श्राद्ध में मांस खाना लिखा और नये सत्यार्थ-प्रकाश में मांस का निषेध किया. स्वामी जी का विश्वास आखिर को वेद की संहिता पर से उठ गया था, ऐसा मालूम देता है लोगों को अपने फँदे में फसाने वास्ते वेद २ पुकारते थे. क्योंकि आर्यावर्त्त के लोग इतना ही जानते हैं. कि वेद का पुस्तक सब से पुराना है. लेकिन वेद में क्या लिखा है और असली वेद कौनसा और कौन

मदिरा प्रवर्त्तक पशु हिंसा का वेद कौनसा जिस वेदों में घोड़ा मारना, वकरा मारना, गाय मारना, इत्यादिक अनेक जानवरों का अग्नि में होमना लिखा ऐसा वेद ईश्वर का बनाया कौन दया धर्मी मान सकता है जिसके मूल में हिंसा भरी है, वह स्वामी जी के वनाये नये भाष्य से कव सच्चा हो सकता है. असली आर्य वेद जैन धर्म वालो के पास है सो दया सत्य से भरा हुवा है; क्योंकि शायनाचार्य वेद अनार्य का भाष्य कर्त्ता लिखता है, ऋषियों के आपस में लड़ाई होने से याज्ञव-ल्क ऋषि ने अगले वेद का वमन करके अर्थात् छोड़ के सूर्य से सीखकर नया वेद रच लिया डाकृर मेक्समूलर तो दयानन्दजी का माने वेद को तीन हज़ार वर्ष वने को हुवा, ऐसा सवूत संस्कृत साहित्य ग्रन्थ में करता है और जैन धर्म वालों ने तो जब से ये वेद पलटाये गये तब ही से जैसे को जैसा समझ रक्खा है, आर्य वेद तो था

द्रव्यानुयोग २ चरणकरण अनुयोग ३ औ
धर्म कथानुयोग ४ जैन सूत्रों को पुराण की स
फिक् मत जानो आप को जियादा तो क्या को
लेकिन जैन धर्म का एक छोटासा शास्त्र कर्म
ग्रंथ है, उसको आप विना गुरु विना बारह ह
वर्ष में समझलो तो आप लोग कहैं, सो हम
प्रतिज्ञा करे. काशी में छपी अबोधनिवारण पु-
स्तक उसके वांचने से ऐसा मालूम पड़ा कि
स्वामी जी को संस्कृत का भी पूरा ज्ञान नहीं था,
"संस्कृतवाक्यप्रबोध" पुस्तकदयानन्दजीने बनाकर
छापा है, उसका कुछ नमूना यहां लिखता हूं
"शौचादिकं कृत्वा संध्यामुपासीरन्" इसका अर्थ
लिखा है, शरीर शुद्धि कर के ईश्वर के ज्ञान वास्ते
संध्योपासन करो, उपासन करो इसका संस्कृत
उपासीरन् कैसे हो सके, अहो व्याकरणी पंडितो!
तुम्हारे को संस्कृत बोलना नहीं आता होय तो
दयानन्दजी से सीखो कुछ कसर होय तो "नित्य"

शब्द संस्कृत लिखके उसका अर्थ लिखा है.(आज) "नित्य" का अर्थ (आज) कैसे बन सके. "शाकसूपौदश्वित् कौदनरोटिकादय" इसका अर्थ लिखा है. शाग, दाल, कढ़ी, भात, रोटी, चटनी आदि क्या स्वामी जी रोटी का नाम संस्कृत में भी रोटी है, आपने ऐसा संस्कृत कहां से निकाला हेम कोष में रोटी के नाम ऐसे लिखे हैं, "पूपो-पूपपोलिकातु पूलिका पूल पूपिका" भला खैर आपने संस्कृत में तो चटनी लिखा ही नहीं क्या "आदय" नाम चटनी का है सो भाषा में चटनी आदि लिखा. "गुड़स्य" को भाव इसका अर्थ लिखा, गुड़ का क्या भाव है. क्या संस्कृत में गुड़ का नाम गुड़ ही है. लोंटा जिसको भावार्थ में लोटा लिखा. आला इसका अर्थ आले लिखा. उर्द्धश्वासत्वात् ऊपर को श्वास चलना लिखा. दयानन्दजी ऐसा अपूर्व संस्कृत बनाना किस विलायत से सीख आये. ऐसा ही वेदभाष्य बनाया

होगा. खैर कुछ हर्जाने की बात नहीं मनुष्य चूक ही जाता है, उपयोग विना वर्त्तने से ऐसा ही हाल होता है, लेकिन जब थोड़ीसी बात का ये हाल है, तो जैन के स्याद्वाद का स्वरूप तो बड़ा ही गंभीर है. मीमांसा के वार्त्तिककार कुमारिल भट्ट जैन धर्मियों से चर्चा में हार गया, तब जैन जती कपट से बनकर जैन धर्म का तत्व सीखकर फिर जैनियों से चर्चा करी वेदं बाबत् तो भी फिर हार गया तब मन में विचारा मैं अभी पूरा तत्व जाना नहीं फिर कपट से जती बनके फिर पढ़के, फिर चर्चा करी फिर हार गया, ऐसे तीन वार किया तो भी हारता ही रहा. अंत में गुरु के चरण में पड़के अपने झूठे वाद के प्रायश्चित के बदले में घास में जल के मर गया ऐसा वेदों का वार्त्तिक कार मीमांसा मत प्रवर्त्तक कुमारिल भट्ट जैसे संस्कृत पाठी ने जैन तत्व को नहीं पहचाना, तो दया-नन्दजी तो कौन गिनती के पंडित व्यास शंकरा-

नाम ऋषभादिक चौवीस तीर्थंकरों का है अरिहंत नाम का कोई पुरुष नहीं भया है, जैन धर्म में ऐसा अर्थ व्याकरण से अरिहंत का किया है आठ कर्म रूपी वैरियों को हने सो अरिहंत चौंसठ देव इंद्रों के पूजने योग्य वास्ते अर्हत अर्ह इति योग्य तथा "पूजार्थे मुक्तिगमनात्पुन संसारे नरु हंतिइत्यरुहंत" मुक्ति गये वाद फिर संसार में जन्म नहीं इस वास्ते अरुहंत ऐसा है, जैसे नारायण नाम के कृष्ण लक्ष्मण आदि नव हुये. लेकिन नारायण फक्त इतना ही नाम का कोई अवतार ईश्वर को टीका पुराणों में नहीं भया. तैसे ही अर्हंत ऐसा गुण संज्ञा चौवीस तीर्थंकर को समझना और गोरखनाथ नाम के दो पुरुष हुये हैं, एक तो जोगियों में हुवा जिसको हुये उन्नीस सौ छप्पन वर्ष हुवा. जिसका चेला विक्रम का भाई भर्तृ पेश्तर हुवा था. फिर तो भर्तृ जैन मुनि हो गया था ऐसा जैन ग्रंथों में दाखिला है

रुक्मणी का बनाया है, उसमें लिखा है सहस अट्ठासी ऋषितनों दल नेमनाथरे पूछे. अब विष्णु मतियों ने विचार लेना चाहिये कि नेमनाथजी कृष्ण के ब्याह में हाज़िर थे तो फिर मच्छंदरनाय के बेटों से जैन धर्म चला कौन बुद्धिवंत मानेगा. भागवत के सुखसागर में लिखा है, जैन धर्म ऋषभदेव से चला है. बुद्ध नाम भी तीर्थंकर का है, विना गुरु के उपदेश विना ही जिन्हों ने तत्व जान लिया सो "बुद्ध बुद्धा स्वयं ज्ञात तत्वा" लेकिन अढ़ाई हज़ार वर्ष के लग भग में गया के मुल्क में एक बुद्ध कीर्त्ति नाम का राजा का लड़का पहली पांच ही दर्शन वालों का शास्त्र पढ़ा प्रमाणों से खंडत जाना, जैन तत्व पढ़ने को जती भेष लिया बाद कई दिनों के जैन धर्म के क़ायदे के बरखिलाफ़ इस के तर्क पैदा हुई सो मांस खाने का मत चलाया, जो अब चीन ब्रह्मा वग़ैरह देशों में चलता है इस धर्म के साथ जैन धर्म वालों के

कुछ ताल्लुक नहीं लेकिन बौद्ध मति भी मूर्त्ति बुद्ध की मानते हैं उस के उत्तरासण का चिह्न होता है, दिगांबरियों की मूर्त्ति नग्न चिह्न की होती है. जैन सनातन स्वेतांबरियों की मूर्त्ति नग्न नहीं होती है, इस चिह्नों से मूर्त्ति पहचानना चाहिये दयानन्दजी लिखते हैं. जैन धर्म वाले इस आर्यावर्त में साढ़े तीन हज़ार वर्ष हुआ सो और विलायतों से आये हैं. स्वामी जी मन में आई ज्यों अनघड़ गप्पों के पत्थर फेंके हैं. आपने किस ग्रंथ के प्रमाण से ये बात लिखी हैं. अब हम ऐसा प्रमाण लिखते हैं. सो जैन धर्म सब धर्मों से आदि और वेद बने को भी आगू का है जिस वेदों को लोग ईश्वर कृत काहते हैं. देखो तुम्हारा ऋग्वेद मंत्र. "ओ५म् त्रैल्योक्य प्रतिष्ठितान् चतुर्विंशतितीर्थंकरान् ऋषभाद्यान्वर्द्धमानांतान् । सिद्धान् शरणं प्रपद्ये ॥" फिर देखो यजुर्वेद में मंत्र. "ओ५म् नमोऽर्हतोऋषभायनमो ऋषभनाथेर्जुर

हतमध्वरं यज्ञेषुनग्नं परमं माहसंस्तुतावारं शत्रुजयं तं शुरिंद्रमाहुतिरिति स्वाहा॥" फिर यजुर्वेद में मंत्र ऐसा है. "ओ५म् त्रातारमिंद्रं ऋषभंवदंति अमृतारमिंद्रहवे सुगतंसुपार्श्वं मिंद्रहवे शक्रमजितं तद्वर्द्धमानपूरहूत मिंद्रमाहुतिरिति स्वाहा॥" फिर आहुति का मंत्र ऐसा है. "ओ५म् नग्नं सुधीरं दिग्वाससं ब्रह्म-गर्भं सनातनं ऊपैमिवीरं पुरषमर्हतमादित्यवर्णं तमसः पुरस्तात स्वाहा" ऋग्वेद में वीर तीर्यंकर के जिन कल्प की महिमा. "ओ५म् पवित्रं नग्नमुपस्पृसाम हैे। येषां नग्नं येषां जातं येषां वीरं सु वीरं ऋग्वेद मं०.१।अ० १।सु० १। स्वति नस्तार्क्षो अरिष्टनेमिः ये अरिष्टनेमिवाइसमा तीर्थंकरथा" अब हमने लिखा है, सो प्रमाण पंडित लोग सब अपने वेदों में देख लेवें इसी तरह योग वशिष्ट में देखो. प्रथम वैराग्य प्रकर्ण अहंकार निषेधाध्याय में "नाहंरामोनमेवांछा विषयेषु नमेमनः शान्तिमासितुमिच्छामि वीतरागोजिनो

ाया" रामचंद्र जी वशिष्ट जी से कहा है, न
ो मैं राम हूं और न मुझे इच्छा है; नहीं मेरा
विषय में मन है, शान्ति पद जो मुक्ति उस की इच्छा
है. वीतराग जिनराज की तरह विचारे रामचंद्र
जी भी जिन समान होने की चाह रक्खी है.
इस बात से साबित है कि जैन धर्म रामचंद्र जी से
पहले इस आर्यावर्त्त में था. देखो महाभारत में
सोरठ देश की महिमा. "युगे २ महापुण्यं दृश्यते
द्वारिकापुरी अवतीर्णोहरिर्यत्र प्रभासे शशि भूषण
रैवताद्रोजिनोनेमि युगादि विमला चले ऋषिणा-
माश्रमादेव मुक्तिमार्गस्य कारणं ।" अर्थ युग २ में
महा पुण्य द्वारिका नगरी दीखती है. जिस जगह
हरि अवतार [illegible] में चन्द्रमा जैसे शोभाय-
मान, फिर जिस देश में गिरनार पर नेमनाथ
युगादि श्री ऋषभदेव शत्रुंजय विमला चल पर
ऋषिओं का आश्रम होने मुक्ति मार्ग का कारण
हुए हैं हे भाइयो ! इस से जैन धर्मी मानने

आवे तो अप शगुन कहते हो, लेकिन श्री कृष्ण तो जैन जती सामने आवे तो बडा भारी शगुन माना है. जती वेषओघाडांडा प्रमुख लिया हुवा, देखो भारत. "आरोहस्वरथे पार्थ गांडी वं वकरे कुरु निर्जिता मेदनी मन्ये निर्ग्रंथो यदि सन्मुख।" कृष्ण कहता है, हे अर्जुन! रथ में चढ गांडी व धनुष हाथ में ले मैं मानता हूं, तैने पृथ्वी जीत ली, क्योंकि निर्ग्रंथ जो जैन जती सो सामने आ रहा है इस कोष में जती का नाम निर्ग्रंथ है, फिर महाभारत में "अर्हंत की महिमा अकारादि हकारांत मुर्धी धोरे फसंयुतं नादविंदुकलाक्रांतं चंद्र मंडल संयुतं। एत देव परं तत्वं योविजानाति-भावतः संसार बंधनं छित्वा सयाति परमांगतिं॥" अर्थ अर्हन ऐसा शब्द सर्वोपरि तत्व है. जो भाव करके जानेगा वह संसार बंधन काटके मुक्ति को जाता है. वडी मनुस्मृति के प्रमाण से जैन धर्म आदि है, "कुलादिवीजंसर्वेषां मायोविमल वाहन चक्षुष्मांश्च-

वगैरह ग्रंथों से विमुख ठहरेगा, दयानन्दजी वाल्मीक रामायण शायद आंखों से देखी नहीं है उसके सर्ग ४४ श्लोक बयालीस तेतालीस में लिखा है. रावण, शिव, ईश्वर की पूजा करता था. अमर कोष और हेम कोष में मुक्ति गये हुये सिद्ध ईश्वर का नाम "शिव" है अर्थात् रावण सिद्धायतन में सिद्ध मूर्त्ति की पूजा करता था, तो फिर स्वमी जी मूर्त्ति पूजा को नई कैसे कहते हैं. पुराने सत्यार्थप्रकाश में दयानन्दजी ने लिखा है "जो तू सच्च बोलेगा तो गंगा और कुरुक्षेत्र में प्रायश्चित करना नहीं होगा" इस हिसाब से झूठ बोलने वाले को गंगा कुरुक्षेत्र में प्रायश्चित करना हुवा तब तो ये स्थान भी तीर्थ ठहर गया. और नये सत्यार्थप्रकाश में लिखा है, तीर्थ पांच सो छः सौ वर्षों से चला है, कौन बुद्धिमान तुम्हारे बनाये ग्रंथों को सच्चा मानेगा, अनेक झूठी बातें जिस में भरी हैं. स्वरोदय ग्रंथ से भी

साकार मूर्त्ति पांच तत्वों का पांच रंग से ध्यान करने में सिद्धि है; द्रव्य गुण पर्याय के स्वरूपको विचारता हुवा मूर्त्ति से वीतराग पदस्थ ध्यान से लयलीन हुय चपक श्रेणी चढ़ता हुवा केवल ज्ञान पायकर अचय निर्वाणराम ऋद्धिसार पद पावे निरकार वस्तुओं का जानने वाला केवल ज्ञानी ईश्वर विना दूसरा नहीं उन की वाणी रूप सूत्र सिद्धांत और उन की साचात कार निज रूप मूर्त्ति इस दोनों के आधार से चतुर्विध श्री संघ को हमेशा कल्याण मंगल वर्त्तता है. ये जिन आज्ञा प्रदीप सिद्ध मूर्त्ति विवेक विलास ग्रंथ शुद्धसमकिती जीवों के आधार भूत है. जैसी थापना मूर्त्ति होगी उसके दर्शन से वैसा ही भाव प्रगट होगा. इस ग्रंथ में लिखित दोष प्रमाद के वश जियादा कमवेश लिखा गया होय तो सज्जन चमा करें और दुर्जन से डर नहीं कारण उनका स्वभाव ही है. सो गुण में अपगुण निकालते हैं. यथार्थ कहना सत्पुरुषों का धर्म है ॥

विक्रम पुर वर नगर में राज्य करे राठोड़ ।
गंगासिंह प्रजापति न्यायवंत सिर मोड ॥
चौवीससय पच वीस का वर्ष वीर निर्वाण ।
उन्नीसौ पचपन प्रगट विक्रम संवत् जान ॥
खरतर भट्टारक वृहत् क्षेमधाड वड़साख ।
साधू गुण पूरण प्रगट धर्मशील गुरु भाख ॥
तसुपद पंकज मधुपशम प्रगटे कुशल नि-
धान । ताके शिष्य बुधाग्रणी मूर्त्ति मंडन
ज्ञान ॥ रच्यो राम ऋद्धिसार मुनिः सुलभ-
बोध निस्तार । पढ़त पढ़ावत सुमन धर नि-
त्तनित मंगला-चार ॥

इति श्रीराम ऋद्धिसार मुनिविर चितेजिन आज्ञा प्रदीपे सिद्ध मूर्त्ति विवेक विलास संपूर्ण ॥